निरंतर विकास और प्रगति के बिना, सुधार, उपलब्धि और सफलता जैसे शब्दों का कोई महत्त्व नहीं है।

– बेंजामिन फ्रैंकलिन

संकट का तापमान

इस वर्ष की गर्मी जिस रूप में आई है, उसकी आशंका पिछले कई महीने से जाहिर की जा रही थी। मगर इस तरह के पूर्वानुमानों की सार्थकता तभी है जब किसी संकट की स्थिति से निपटने के लिए तैयारी भी साथ-साथ की जाए। विडंबना यह है कि विज्ञान की उपलब्धियों के सहारे अब आने वाले दिनों के मौसम को लेकर कई बार सटीक अनुमान तो लगा लिए जाते हैं, लेकिन उसके मुताबिक जरूरी कदम उठाने के लिए न तो सरकारों को कोई ठोस पहल करते देखा गया और न ही आम जनता इसके प्रति सचेत होती है या अपने स्तर पर कोई सावधानी बरतती है। यह बेवजह नहीं है कि पिछले कुछ दिनों से गर्मी का मौसम एक तरह से कहर ढा रहा है और लोग इसे झेलने पर मजबूर हैं। चिलचिलाती धूप और लू की मार से बचने के लिए लोगों को अब अतिरिक्त इंतजाम करना पड़ रहा है। कई जगहों पर लू की वजह से कुछ लोगों की मौत हो जाने के अलावा बिहार में कई स्कूली बच्चों के बीमार पड़ने की खबरें आईं। पारा किस कदर ऊपर की ओर चढ़ रहा है, उसका अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि गर्मी से उपजी परेशानी अब हादसों और पेयजल तक के संकट के रूप में बदल रही है।

गौरतलब है कि बुधवार को राजधानी दिल्ली में मुंगेशपुर इलाके में तापमान 52.9 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच गया और दिल्ली सहित कई राज्यों में इसका असर अब जनजीवन बाधित होने के तौर पर भी सामने आ रहा है। दिल्ली में अब तक दर्ज किया गया यह सबसे ज्यादा तापमान है और इससे अस्सी वर्ष पहले का वह रिकार्ड टूटा है, जब 29 मई को तापमान 47.2 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच गया था। इसके अलावा, पंजाब और हरियाणा सहित उत्तर-पश्चिम भारत के कई शहर लू की चपेट में हैं और उन इलाकों के लिए मौसम विभाग को लाल चेतावनी जारी करनी पड़ी। यानी कि जिस तरह की गर्म हवाएं चल रही हैं, उससे स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं पैदा होने का खतरा है। हालांकि बुधवार को ही शाम में मौसम ने करवट बदली और आंधी के साथ कुछ इलाकों में बारिश भी हुई, जिससे राहत के आसार बने, लेकिन तापमान और गर्मी का जैसा रुख बना हुआ है, उसके मद्देनजर आने वाले कुछ दिन संवेदनशील हो सकते हैं और लोगों को हर स्तर पर सावधानी बरतने की जरूरत है।

मुश्किल यह है कि जिस समय कुदरत की मार से उपजे संकट का सामना करने के लिए आम लोगों को सतर्क होना चाहिए और सरकार की ओर से हर जरूरी कदम उठाए जाने चाहिए, वैसे में अलग-अलग राज्यों के बीच एक विचित्र खींचतान शुरू हो जाती है। दिल्ली सरकार की ओर से यह आरोप लगाया गया कि भीषण गर्मी से उपजे पेयजल संकट के बीच हरियाणा दिल्ली के हिस्से का पानी नहीं दे रहा है। इस मसले पर दिल्ली सरकार ने सुप्रीम कोर्ट जाने की भी बात कही। सवाल है कि प्रकृति के कोप से उपजे हालात से निपटने के लिए सबको साथ मिल कर कोई रास्ता या फिलहाल मुश्किल का तुरंत कोई हल निकालना चाहिए या आम लोगों के सामने उपजे पीने के पानी तक के संकट के समय टकराव का रास्ता अख्तियार करना चाहिए? यह ध्यान रखने की जरूरत है कि पर्यावरण में बढ़ते तापमान की वजह से जो स्थितियां पैदा हो रही हैं, उससे सामूहिक प्रयासों और मजबूत राजनीतिक इच्छाशक्ति की जरिए ही निपटा जा सकता है। ऐसे में मौसम के रुख और बदलते जलवायु की अनदेखी करना और संकट के समय खींचतान करना संकट को और जटिल बनाएगा।

जानलेवा सफाई

इससे बड़ी विडंबना और क्या होगी कि आधुनिक तकनीकी के जरिए जटिल कामों को भी आसान बनाने के इस दौर में कुछ लोगों को सीवर में या फिर शौचालय की टंकी में घुस कर उसकी सफाई करने के लिए उतारा जाता है और उनमें से कई मजदूर जहरीली गैस की चपेट में आकर मारे जाते हैं। गौरतलब है कि राजस्थान के भरतपुर में गुरुवार को शौचालय की टंकी की सफाई करने उतरे दो युवकों का दम घुटने लगा तो उन्होंने मदद के लिए आवाज लगाई। उन्हें बचाने के लिए तीन अन्य युवक नीचे उतरे तो वे भी जहरीली गैस के कारण बेहोश हो गए। किसी तरह टंकी का एक हिस्सा तोड़ कर उन सबको बाहर निकाला गया, मगर तीन युवकों की जान चली गई। इसके बाद एक रस्म की तरह सरकार की ओर से मामले की जांच और पीड़ित परिवार को राहत प्रदान करने का निर्देश जारी किया गया, सहानुभूति जताई गई। मगर ऐसी घोषणाओं में शायद ही कभी ऐसी इच्छाशक्ति दिखती है कि सीवर या फिर शौचालय की टंकी की सफाई कराने वालों के जिम्मेदार लोगों को कठघरे में खड़ा किया जाए।

यह अफसोसनाक है कि आए दिन सीवर या शौचालय की टंकी की सफाई के दौरान मजदूरों की जान जाने की खबरें आती रहती हैं। पिछले लगभग एक महीने के दौरान सीवर की सफाई के दौरान कम से कम सात मजदूरों के मरने की घटनाएं हुईं। आंकड़ों के मुताबिक, हर वर्ष देश में इस तरह सौ से ज्यादा मजदूरों की मौत होती है। दुनिया के विकसित देशों में जहां ऐसे कामों को मशीनों से कराए जाने की व्यवस्था बन चुकी है, वहीं भारत में इस मामले में कानूनों का पालन करने की तो दूर, किसी मजदूर को सीवर में उतारते हुए उन्हें कोई सुरक्षा उपकरण देना भी जरूरी नहीं समझा जाता। किसी मजदूर की मौत की घटना के तूल पकड़ने के बाद प्रशासन की ओर से मुआवजे या राहत की घोषणा होती है, मगर ऐसा कोई उपाय नहीं निकाला जाता कि आगे इस तरह की घटना को पूरी तरह रोका जा सके। आखिर इसके पीछे क्या कारण है कि निर्माण संबंधी भारी कामों में भी आधुनिक तकनीकी और मशीनों का इस्तेमाल किया जाता है, मगर सीवर या शौचालय की टंकी की सफाई के मामले में इस पर ध्यान देना जरूरी नहीं समझा जाता!

हाशिये पर सदाबहार पारिस्थितिकी

वन सर्वेक्षण रपट 2021 के अनुसार देश में कुल सदाबहार वन क्षेत्र 4,992 वर्ग किलोमीटर है। यह भी सही है कि 2019 के आकलन की तुलना में देश के सदाबहार क्षेत्र में सत्रह वर्ग किलोमीटर की वृद्धि हुई है। मगर नुकसान के अनुपात में यह भरपाई बेहद कम है।

सीमा अग्रवाल

पिछले दिनों बोस इंस्टीट्यूट कोलकाता और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के वैज्ञानिकों ने एक अध्ययन में पाया कि शहरों में तेजी से बढ़ता वायु प्रदूषण सदाबहार (मैंग्रोव) पारिस्थितिकी के लिए घातक बनता जा रहा है। वैज्ञानिकों ने कहा कि सदाबहार वनों के लिए प्रसिद्ध सुंदरबन डेल्टा की हवा में हानिकारक वायु प्रदूषकों का स्तर लगातार बढ़ रहा है। इससे डेल्टा का सदाबहार वन क्षेत्र सिकुड़ता जा रहा है। अध्ययन में शामिल एक वैज्ञानिक ने कहा कि कोलकाता के आसपास के क्षेत्र की हवा में जहरीली भारी धातुएं जैसे सीसा, क्रोमियम, कैडमियम की मात्रा काफी है। इसका असर वहां के वायुमंडल पर हो रहा है।

वैज्ञानिकों के अनुसार डेल्टा क्षेत्र में बढ़ते प्रदूषण को नियंत्रित करना बहुत जरूरी है। आज भी सुंदरबन के इलाके में स्थानीय नाविक अपनी नावों में पुरानी मोटर का इस्तेमाल करते हैं। इन नावों से निकलने वाला काला धुआं हवा को प्रदूषित करता है। सदाबहार वनों से सटे इलाकों की प्रति व्यक्ति आय बहुत कम है, इसलिए आज भी यहां लोग ठोस ईंधन जैसे लकड़ी, कोयला, गोबर के उपले जलाते हैं। इसके कारण यहां की हवा में कार्बन का स्तर लगातार बढ़ता जा रहा है।

दरअसल, उपयोगिता के मुताबिक 'मैंग्रोव' की प्रकृति को देखते हुए उसे सदाबहार कहा जाने लगा। गौरतलब है कि सदाबहार वन ऊष्ण कटिबंधीय वृक्ष और झाड़ियां हैं, जो ज्वारीय क्षेत्रों में समुद्र के किनारे, लवणीय दलदल और कीचड़ भरे तटों पर पाए जाते हैं। जलवायु परिवर्तन का सामना करने, जैव विविधिता की रक्षा, सुनामी और चक्रवात जैसी प्राकृतिक आपदाओं के जोखिम को कम करने में सदाबहार वन अहम भूमिका निभाते हैं। समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र की मजबूत कड़ी होने के साथ ये पर्यावरण, अर्थव्यवस्था और समुदायों को लाभ पहुंचाते हैं। जलवायु परिवर्तन पर 'संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क' सम्मेलन के एक अनुमान के मुताबिक दुनिया भर में करीब 67 फीसद सदाबहार वन आवास नष्ट हो चुके हैं। सुंदरवन, भितरकनिका, पिचवरम, चोराओ और बाराटांग भारत के कुछ खूबसूरत सदाबहार वन क्षेत्रों के रूप में जाने जाते हैं, जो आज सबसे अधिक संकटग्रस्त हैं।

वन सर्वेक्षण रपट 2021 के अनुसार देश में कुल सदाबहार वन क्षेत्र 4,992 वर्ग किलोमीटर है। यह भी सही है कि 2019 के आकलन की तुलना में देश के सदाबहार क्षेत्र में सत्रह वर्ग किलोमीटर की वृद्धि हुई है। मगर नुकसान के अनुपात में यह भरपाई बेहद कम है। 'सेंटर फार साइंस ऐंड एनवायरमेंट' के एक अध्ययन के मुताबिक सदाबहार वन क्षेत्र में कमी आने से कार्बन उत्सर्जन 2050 तक लगभग तीस गुना बढ़ सकता है। वहीं 2022 में आयोजित काप-27 में कहा गया कि सदाबहार वन अन्य ऊष्ण कटिबंधीय वनों की तुलना में चार से पांच गुना अधिक कार्बन अवशोषित करने में सक्षम हैं।

विशेषज्ञों के मुताबिक सदाबहार वन न केवल जीवों, बल्कि पौधों की भी कई प्रजातियों को संरक्षण देते हैं। ये दुनिया में पेड़ों की एकमात्र ऐसी प्रजाति हैं, जो खारे पानी में जीवित रहते हैं। यह जैव-विविधिता का एक अनूठा पारिस्थितिकी तंत्र है। इसमें सैकड़ों मछलियां, सरीसृप, उभयचर, कीट, सूक्ष्मजीव, शैवाल, पक्षी और स्तनपायी प्रजातियां पाई जाती हैं। सदाबहार वन ज्वार की लहरों के अवशोषक के रूप में भी काम करते हैं। ये अपनी उलझी हुई जड़ों के साथ तलछट को स्थिर करके मिट्टी कटान को रोकने में मदद करते हैं। समुद्री जीवों की खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने में भी ये महती भूमिका निभाते हैं। इन्हीं सब कारणों से सदाबहार वन क्षेत्र दुनिया के अधिकांश निम्न और मध्यम आय वाले देशों में खास महत्त्व रखते हैं।

> विशेषज्ञों का मानना है कि वायु प्रदूषण के अलावा तेजी से बढ़ता शहरीकरण, तटीय विकास, तीव्र औद्योगीकरण, तटों और जंगलों की कटान आदि ऐसे कारण हैं, जिसने सदाबहार पारिस्थितिकी को हाशिये पर धकेल दिया है। हालांकि जलवायु परिवर्तन और वैश्विक ताप से जूझ रहे विश्व ने सदाबहार पारिस्थितिकी को बचाने के कई प्रयास किए हैं। इसमें काप-27 के दौरान बना 'मैंग्रोव एलायंस फार क्लाइमेट' उल्लेखनीय है। इसमें विश्व के तमाम देशों ने मिलकर शपथ ली कि वे अपने-अपने देश में सदाबहार पारिस्थितिकी से जुड़े खतरों की पहचान करेंगे। उन्हें एक-दूसरे के सहयोग से दूर भी करेंगे।

अध्ययन के अनुसार पिछले बीस वर्षों में खेती और शहरीकरण के चलते सदाबहार वनों को काटने से कार्बन भंडार में 15.84 करोड़ टन की कमी आई और कार्बन उत्सर्जन तेजी से बढ़ा है। 'ग्रीन पीस इंडिया' के आंकड़े बताते हैं सदाबहार वन क्षेत्रों से सटे तटीय शहरों जैसे चेन्नई, मुंबई, कोलकाता, कोचीन में पीएम 2.5, पीएम 10 तथा नाइट्रोजन आक्साइड का स्तर काफी बढ़ा है। यह स्तर विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा तय मानकों से करीब पांच से दस गुना ज्यादा है। यानी तटवर्ती शहरों की हवा सांस लेने लायक नहीं बची है।

वायुमंडल में काला कार्बन, पीएम 2.5 और पीएम 10 कणों के होने से सदाबहार पौधों में प्रकाश संश्लेषण की दर कम हो जाती है। इससे सदाबहार पारिस्थितिकी में मिलने वाले पौधे और शैवाल अपना पूरा भोजन नहीं बना पाते और मरने लगते हैं। प्रदूषित हवा में आक्सीजन की कमी के कारण सदाबहार वन और इसके पारिस्थितिकी तंत्र में रहने वाले जीवों का श्वसन बाधित रहता है। हवा जब दूषित होती है तो उसमें ग्रीन हाउस गैसों का स्तर ज्यादा होता है। इन गैसों के प्रभाव से समुद्र के पानी का तापमान बढ़ता है। इसमें घुली आक्सीजन की मात्रा घटने लगती है। इससे भी सदाबहार पारिस्थितिकी तंत्र खत्म होने लगता है।

विशेषज्ञों का मानना है कि वायु प्रदूषण के अलावा तेजी से बढ़ता शहरीकरण, तटीय विकास, तीव्र औद्योगीकरण, तटों और जंगलों की कटान आदि ऐसे कारण हैं, जिसने सदाबहार पारिस्थितिकी को हाशिये पर धकेल दिया है। हालांकि जलवायु परिवर्तन और वैश्विक ताप से जूझ रहे विश्व ने सदाबहार पारिस्थितिकी को बचाने के कई प्रयास किए हैं। इसमें काप-27 के दौरान बना 'मैंग्रोव एलायंस फार क्लाइमेट' उल्लेखनीय है। इसमें विश्व के तमाम देशों ने मिलकर शपथ ली कि वे अपने-अपने देश में सदाबहार पारिस्थितिकी से जुड़े खतरों की पहचान करेंगे। उन्हें एक-दूसरे के सहयोग से दूर भी करेंगे। तटीय क्षेत्रों को सदाबहार पारिस्थितिकी के फलने-फूलने लायक बनाएंगे। इसके तहत भारत ने 'राष्ट्रीय रेड प्लस' कार्यक्रम में सदाबहार वनों को शामिल किया। साथ ही भारत ने 2030 तक वन क्षेत्र से ढाई से तीन अरब टन तक 'कार्बन सिंक' बनाने का लक्ष्य रखा। इसके लिए सदाबहार वनों को बचाने का संकल्प लिया गया।

आइआइटी कानपुर के विशेषज्ञों के अनुसार सुंदरवन क्षेत्र की वायु गुणवत्ता को सुधारने के लिए भारत सरकार को दस प्रमुख बिंदुओं पर कार्य करने की आवश्यकता है। बोस इंस्टीट्यूट के विशेषज्ञों ने सलाह दी है कि इस क्षेत्र में जल्द से जल्द सौर ऊर्जा और पवन ऊर्जा पहुंचाना आवश्यक है। इससे वहां दैनिक जरूरतों के लिए मिट्टी के तेल का इस्तेमाल बंद होगा। सरकार को इस क्षेत्र के प्रत्येक घर में एलपीजी गैस रियायती दर पर उपलब्ध करानी होगी। इस क्षेत्र में पर्यटन को विनियमित करके वायु प्रदूषण में कमी लाई और सदाबहार वन क्षेत्र को संरक्षित किया जा सकता है। नावों में पुरानी मोटर को प्रतिबंधित कर देना चाहिए।

सदाबहार वन विशेषज्ञों का मानना है कि कोलकाता, चेन्नई, विशाखापत्तनम और बांग्लादेश के तटवर्ती इलाकों में भूमि के प्रयोग के लिए बने नियम-कानूनों का सख्ती से पालन करने से भी इस बहुमूल्य पारिस्थितिकी तंत्र को बचाया जा सकता है। सुंदरबन डेल्टा की विविधता को संरक्षित करने के लिए यहां चलने वाले ईंट भट्ठों और प्रदूषण फैलाने वाली फैक्ट्रियों को बंद करवाना होगा। भारत एक सही संरक्षण रणनीति लागू करके सदाबहार वनों के सतत विकास और प्रबंधन में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकता है।

उम्र की सीमा

त्विंकल तोमर सिंह

भय सबके अंदर किसी कोने में बैठा है। असफलता का भय, किसी के ऊपर प्रभाव न छोड़ पाने का भय, अपनों से अलग होने का भय, धन चले जाने का भय, सत्ता चले जाने का भय। पर एक निश्चित आयु पार कर लेने के बाद इंसान का सबसे बड़ा भय होता है- जीर्ण होना। जीर्णता जो शरीर के पोर-पोर में झलकने लगती है। ऊर्जा क्षीण होने लगती है, उल्लास पहले जैसा नहीं रहता। आने वाला जन्मदिवस अब उसे उतना हर्षित नहीं करता, जितना पहले किया करता था। वह बचता है कैलेंडर में अपने जन्मदिवस की तारीख को पास आते देखने से। वह कतराता है दर्पण में चेहरे की झुर्रियों को देखने से। जाने किस गोपनीय विधि से प्रकृति कार्य करती है कि प्रतिदिन वही चेहरा दर्पण में दिखता है, पर वर्षों पहले ली गई तस्वीरें बताती हैं कि दर्पण ने झूठ बोला, चेहरा तो बदल गया।

अभी ही तो हमने जीवन को समझा था, जीवन जीने की कला सीखी थी, कुछ रस चखे थे और इतनी जल्दी जीवन का प्रक्षेपण पथ पूर्ण होने को आ गया। काश कोई विद्या होती, कोई तो तंत्र होता कि समय बांध कर रख लिया जाता। आयु का बढ़ना, समय का हाथ से फिसलते जाना क्या इतना बुरा है कि समय को बांध कर रखने की इच्छा को मन में स्थान दिया जाए? विचार किया जाए कि घड़ी को हाथ में बांध लेने से समय भी मुट्ठी में बंद हो जाता तो कैसा होता? सबका अपना समय अपनी मुट्ठी में। जैसे चाहे वैसे खर्च करें। पर समय का रुकना ऐसा होता, जैसे एक कक्ष के सारे किवाड़, सारे रोशनदान, सारी खिड़कियां बंद हों, हवा रुंध जाए। दृश्य कितना भी सुंदर हो, उसे सदा के लिए निहारा नहीं जा सकता। उससे भी मन विरक्त हो जाता है।

आमतौर पर लोग बीते हुए सुख के पलों को स्मरण करके वर्तमान से असंतुष्ट रहते हैं। बीता यौवन उन्हें जीवन से रूप, बल, शक्ति और स्वास्थ्य संपदा के ह्रास का अहसास कराता रहता है। सफेद होते बाल, आंखों पर चश्मा, माथे पर लकीरें, चेहरे पर ताजगी की कमी, हम तो ऐसे पहले न थे। पीछे मुड़कर देखने पर हम पाते हैं कि हम बीते वर्षों में कितने प्रसन्न थे। चिंताएं कम थीं, कर्तव्यों के बोझ ने हमारी रीढ़ को टेढ़ा नहीं कर रखा था, सामाजिक मान-सम्मान की चाह नहीं थी। हमारे पास आशाओं का एक सागर लबालब भरा था। हमने दुख के थपेड़े नहीं देखे थे। हमारी न केवल आयु कम थी, सपने अधिक थे। हम उन्मुक्त होकर संसार का सुख लेते थे। पर अपने अंदर एक प्रश्न का उत्तर टटोल कर देखें- क्या आत्मा में ये निखार था? दुखों को सहने के लिए आवश्यक लचीलापन मेरुदंड में था? क्या हम इतने सशक्त थे कि संघर्षों की आंधी हमें तिनके की तरह उड़ा न सके? हर परिस्थिति को संयत रहकर झेल सकने की युक्ति बुद्धि में थी? बिरला ही कोई होगा जो यह बात दृढ़ता से कह सकेगा कि दस वर्ष पूर्व भी वह उतना ही परिपक्व था जितना कि आज।

हमने देखा कि शरीर बूढ़ा होता जाता है, पर हम यह नहीं अनुभव कर पाए कि आत्मा हर दिन नया अनुभव, नया ज्ञान पाकर, नई परीक्षाओं से गुजर कर और युवा होती जाती है। आत्मा अपनी पूर्णता और प्रबलता की ओर निरंतर यात्रा कर रही थी। क्यों हमको बीते समय में की गई मूर्खताओं पर विक्षोभ होता है? अतीत में किसी मोड़ पर लिए गए गलत निर्णय के प्रति ऐसा क्यों लगता है कि काश उस समय अक्ल आ गई होती। हममें से कई लोग ऐसे होंगे जो अपने बचपन या अपनी युवावस्था के सुखों को स्मरण करके आहें भरते हैं। कुछ ज्ञानी ऐसे भी मिलेंगे जो अतीत में जाने से साफ इनकार कर देंगे, क्योंकि चीजें एक 'पैकेज' के रूप में मिली हैं। 'टाइम ट्रैवेल' यानी 'समय की यात्रा' करके अतीत में पहुंच गए तो आज की बुद्धि के संग नहीं पहुंचेंगे। ज्ञान, अनुभव, परिपक्वता भी तो चली जाएगी। प्रसिद्ध अमेरिकी निर्माता निर्देशक वाल्ट डिज्नी का कहना है- 'बूढ़ा होना अनिवार्य है, लेकिन परिपक्व होना वैकल्पिक है!'

दुख चाहे आज मिले या कल, यह एक वरदान ही है! सुख मात्र अच्छे कर्मों के पुरस्कार के रूप में मिलता है। वह भोग कराता है, कुछ सिखाता नहीं है। दुख, पीड़ा, बढ़ती वय से शरीर भले ही पीला पड़ता जाए, आत्मा हरी होती जाती है। यों, जैसे बीज के दल सूख जाते हैं और अंकुर पनपता जाता है। हमें इसी बिरवे को पोषित करना है, बीज का दल सूख गया, इसका मातम नहीं मनाना है। आयु बढ़ने के कुछ कठिन और अप्रिय पहलू हैं, पर इन्हें बढ़ती उम्र के कुछ शानदार पहलुओं पर हावी नहीं होना चाहिए। एक अध्ययन में पाया गया कि मध्यम आयु वर्ग के लोगों की अपेक्षा वरिष्ठ आयु वर्ग के लोग अधिक प्रसन्न रहते हैं। इस विषय पर लेखक सेवेरियो स्ट्रेंजेस कहते हैं, 'यह बेहतर संघर्ष कर पाने की क्षमताओं के कारण हो सकता है। वृद्ध लोगों में परेशानियों या नकारात्मक परिस्थितियों से निपटने के लिए आंतरिक तंत्र होते हैं, जो युवा लोगों की तुलना में बेहतर होते हैं।'

सुप्रसिद्ध लेखक चार्ल्स डिकेंस का कथन है- 'हमें अपनी आयु अपने अंदर होने वाले परिवर्तनों से गिननी चाहिए, न कि वर्षों से।' तो अपने अंदर आए परिवर्तनों से आयु नाप कर देखने पर पता चलेगा कि अभी तो कुछ उम्र गुजरी ही नहीं। सोच कर देखा जाए, ईश्वर कितना दयालु विनिमय व्यापारी है कि अगर वह हमसे कुछ लेता है तो बदले में उतनी ही गुणवत्ता की कोई अन्य वस्तु हमें प्रदान कर देता है। वह चुपके से शरीर की प्रबलता को आत्मा की प्रबलता से प्रतिस्थापित कर देता है और हमें आभास भी नहीं होता। सब कुछ कितना गोपन विधि से हो रहा है हमारे ही भले के लिए, पर हम समझ ही नहीं पाते।

दुनिया मेरे आगे

> अतीत में किसी मोड़ पर लिए गए गलत निर्णय के प्रति ऐसा क्यों लगता है कि काश उस समय अक्ल आ गई होती। कई लोग अपने बचपन या अपनी युवावस्था के सुखों को स्मरण करके आहें भरते हैं। कुछ ज्ञानी अतीत में जाने से साफ इनकार कर देंगे, क्योंकि चीजें एक 'पैकेज' के रूप में मिली हैं।

विचित्र शिथिलता

अनुच्छेद 370 के हटने के करीब पांच वर्षों के बाद भी कश्मीरी पंडितों की घर वापसी सरकारी प्रक्रिया में आज भी उलझी हुई है। इस सरकार के आते ही भीषण व्यथा का संत्रास झेलते लोगों में एक आशा की किरण जगी थी कि वे अपने घर में जिंदगी जीने का नूतन अवसर पा सकेंगे। पांच साल पूर्व करीब चार सौ परिवारों ने बिना सरकारी सहायता के घाटी में लौटने की कोशिश की थी। इस विषय के निपटारे में 'दिल्ली अभी दूर' दिख रहा है। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2021 में भारत सरकार ने राज्य सरकार को निर्देशित कर दिया था कि वे राज्य के कुल बजट का ढाई फीसद राशि कश्मीरी पंडितों के पुनर्वास में व्यय सुनिश्चित करे। जब पांच वर्षों से राज्य में केंद्र का ही शासन लागू है तो फिर इतनी शिथिलता होना भी आश्चर्यजनक है। आशा की जानी चाहिए कि पैंतीस वर्षों से पीड़ित पंडितों के घर वापसी की दिशा में शीघ्र कारवाई की पहल हो और जिन लोगों ने अपने खर्चे से लौटने के लिए निवेदन पत्र दिया है, उन्हें तुरंत अनुमति देते हुए पूरी सुरक्षा भी सुनिश्चित की जाए।

– अशोक कुमार, पटना, बिहार

अपराध के पांव

लगातार आने वाली खबरों से साफ है कि देश में साइबर अपराधों की रफ्तार तेजी से बढ़ रही है। कई सरकारी सेवाएं बढ़ते साइबर अपराधों के कारण बुरी तरह से प्रभावित हुई हैं। हर माह हजारों की तादाद में दर्ज होने वाली शिकायतों का अगर समाधान किया भी जाए तो उसमें जितना वक्त लगता है, उसमें तब तक लोगों का भारी आर्थिक नुकसान हो जाता है। इससे बचाव का रास्ता यही है कि जैसे ही किसी व्यक्ति के साथ साइबर अपराध की घटना घटे, उसका बैंक खाता तुरंत फ्रीज हो जाए। तभी उसका नुकसान रुक सकता है। इसके लिए रिजर्व बैंक को आगे आना होगा और ऐसा तंत्र तैयार करना होगा कि बैंक खाताधारक घर बैठे ही अपना अगर खाता फ्रीज कर लेता है तो उसका होने वाला नुकसान रुक सकता है। इसके लिए सभी बैंकों को इस दिशा में काम करना होगा। इससे कुछ हद तक साइबर अपराधों पर लगाम लगाने में मदद मिल सकेगी।

– आरके शर्मा, रोहिणी, दिल्ली

प्रकृति का झटका

'भारी पड़ती कुदरत की मार' (लेख, 24 मई) पढ़ा। प्रकृति के साथ खिलवाड़ के दुष्परिणाम धीरे- धीरे सामने आ रहे हैं। गर्मी में बरसात, बरसात में गर्मी और ठंड में पसीने के अहसास के बावजूद हम सचेत नहीं हो रहे हैं। अभी धरती तप रही है, कहीं- कहीं भूकम्प भी तबाही मचा देते हैं। कुदरत का एक झटका हमें बरसों पीछे ला खड़ा करता है। हाल ही में दुबई में यह देखने को मिला जहां बरसात ने काफी तबाही मचाई। दुबई में पिछले पचहत्तर वर्ष बाद इस तरह की बरसात देखने को मिली। कहीं न कहीं प्रकृति के साथ छेड़छाड़ का ही परिणाम है। इसके पीछे कृत्रिम बरसात करवाना भी बड़ा कारण माना जा रहा है। साथ ही जिस तेजी से शहर बस रहे हैं, वे थोड़ी-सी बरसात नहीं झेल पा रहे हैं। अभी भी वक्त है संभलने का, मानवता की राह चलने की जरूरत है, प्रकृति संरक्षण का प्रण लिया जाए। प्रकृति के बिना हमारा जीवन संभव नहीं है। प्रकृति के साथ तालमेल बिठाना ही होगा।

– साजिद अली, चंदन नगर, इंदौर

खतरे की घंटी

आज जिस गांव, कस्बे और शहर पर नजर डाली जाए, कंक्रीट के जंगल बढ़ते जा रहे हैं। बाग, खेत खलिहान सब उजड़ते नजर आते हैं। आधुनिकता की अंधी दौड़ मानो सब कुछ निगल जाना चाहती हो। नए कारखाने, नए भवन, उपजाऊ जमीन की छाती पर चढ़े बैठे हैं। हर घर, गाड़ी और दफ्तर वातानुकूलन के नाम पर वातावरण में आग उगलने का काम कर रहे हैं और सड़कों पर निकलना मानो जान हथेली पर रखने के समान हो गया है। कहीं ऐसा न हो की भावी पीढ़ी हमारे कर्मों का फल भोगे और हम आलोचना के शिकार हो जाएं। भावी पीढ़ी हमें कोसने पर मजबूर न हो जाए, इसलिए हमें अभी सजग हो जाना चाहिए। आज की सजगता हमारे कल को सुरक्षित कर सकती है। इसलिए हमें गंभीरता से इस विषय पर विचार करना चाहिए और भविष्य को सुरक्षित करना चाहिए।

– मनोज पुरुषार्थी, मेरठ

इज़राइल-फिलिस्तीन युद्ध

गंभीर संकट

इज़राइल-फिलिस्तीन युद्ध बहुत लंबा खिंचता जा रहा है जिसके भयानक मानवीय रूप से त्रासद परिणाम सामने आए हैं। उर्दू में 'राफ़ा' का अर्थ बेहतरी या समृद्धि है, पर इस शहर में बच्चों समेत कम से कम 45 लोगों की मौत हुई। ये एक शरणार्थी शिविर में थे जो गाजा में इज़राइली हवाई हमले का शिकार बन गया। स्वाभाविक रूप से इस कृत्य की अंतरराष्ट्रीय स्तर पर निन्दा हुई तथा इज़राइल फिलिस्तीन से युद्ध के मामले पर और अलग-थलग पड़ गया। कुछ ही दिन पहले अंतरराष्ट्रीय न्यायालय ने 'यहूदी राष्ट्र' को राफा में कार्रवाई बंद करने का आदेश दिया था। हालांकि, संयुक्त राष्ट्रसंघ की सर्वोच्च अदालत ने पिछले सप्ताह ही इज़राइली बलों को कार्रवाई बंद करने का आदेश दिया था, लेकिन उनके सीमावर्ती शहर पर हमले जारी रहे जो लंबे समय से देश में अंतिम शरणस्थली बना हुआ है। इस बीच इज़राइली हमलों के कारण फिलिस्तीनियों के प्रति बढ़ती एकजुटता का नतीजा 'आल आईज़ आन राफ़ा' नारे पर केन्द्रित हैं जो सोशल मीडिया में बहुत लोकप्रिय हो गया है। यह गाजा शहर में लगातार जारी नरसंहार की ओर संकेत करता है और बहुत से लोगों ने हैशटैग आल आईज़ आन राफा पर शोक संदेश भेजे हैं। इस नारे के प्रयोग से वर्तमान युद्ध के प्रति जागरूकता पैदा करने में सहायता मिली है। इस महीने के प्रारम्भ में सीमा पार गाजा में इज़राइल द्वारा सैनिक कार्रवाई तेज करने तथा क्रासिंग पर कब्जे के पहले राफा गाजा में मानवीय सहायता भेजने का प्रमुख बंदरगाह था। राफा में लड़ाई के कारण एक मिलियन से अधिक फिलिस्तीनी विस्थापित हुए हैं। इनमें से बहुसंख्य पहले ही इज़राइल और हमास के बीच संघर्ष के कारण विस्थापित हो चुके हैं। इस बीच व्हाइट हाउस के अनुसार, संभवत: अमेरिकी राष्ट्रपति जो बाइडेन

इज़राइल के प्रति अपना दृष्टिकोण नहीं बदल रहे हैं क्योंकि इस घटना ने अभी वह 'लाल रेखा पार नहीं की है' जिससे अमेरिकी समर्थन में परिवर्तन पर विचार किया जा सके।

ऐसा इस तथ्य के बावजूद है कि पिछले साल 7 अक्टूबर को युद्ध शुरू होने के बाद पहली बार इज़राइली टैंक मध्य राफा में पहुंचे हैं। इज़राइल को वैश्विक स्तर पर एक और धक्का लगा है जो संभवत: गाजा पट्टी में रक्तपात समाप्त करने का व्यापक संकेत है। हालांकि, किसी को केवल हमास आतंकियों के मारे जाने पर चिन्ता नहीं थी, पर अब स्पेन, नार्वे और आयरलैंड ने फिलिस्तीन की स्वतंत्रता को मान्यता दे दी है। इन तीन देशों ने किसी राज्य का अस्तित्व स्वीकार करने के बजाय केवल उसकी संभावना स्वीकारी है। इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप फिलिस्तीनी अथारिटी तथा तीन देशों के बीच निकट राजनयिक संबंध स्थापित हो जाएंगे। सब ने घोषणा की है कि वे फिलिस्तीन को 1967-पूर्व की सीमाओं के आधार पर स्वीकार करते हैं जिसकी राजधानी पूर्वी येरूशलेम है। संयुक्त राष्ट्र महासभा के 193 सदस्यों में से 143 ने फिलिस्तीन को मान्यता दे दी है। नवीनतम स्वीकृति इस बात का प्रमाण है कि इस अवधारणा का आर्थिक व राजनयिक रूप से शक्तिशाली पश्चिमी देशों में समर्थन शायद बढ़ रहा है। इज़राइल ने पहले ही पश्चिमी किनारे पर कब्जा कर लिया है तथा गाजा पट्टी उसके घेरे में है। इज़राइल वहां एक युद्ध लड़ रहा है जिसमें 36,000 से अधिक लोग मारे गए हैं। ऐसे में ऐतिहासिक रूप से प्राचीन फिलिस्तीन का कुछ बचा नहीं है। हालांकि, इज़राइली प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतनयाहू को इस बात का श्रेय दिया जाना चाहिए कि उन्होंने राफा में मौतों को एक 'त्रासद भूल' कहा है।

आध्यात्मिक संस्थानों पर निशाना

पश्चिम बंगाल में आजकल आध्यात्मिक संस्थान तृणमूल कांग्रेस के निशाने पर हैं। रामकृष्ण मिशन पर हमलों ने राज्य के राजनीतिक परिदृश्य और उसके धार्मिक सद्भावना पर पड़ने वाले प्रभावों पर चिन्ता पैदा कर दी है।

प्रफुल्ल गोराडिया
(लेखक, पूर्व राज्यसभा सदस्य हैं)

पश्चिम बंगाल में आजकल आध्यात्मिक संस्थान तृणमूल कांग्रेस के निशाने पर हैं। रामकृष्ण मिशन पर हमलों ने राज्य के राजनीतिक परिदृश्य और उसके धार्मिक सद्भावना पर पड़ने वाले प्रभावों पर चिन्ता पैदा कर दी है। पश्चिम बंगाल आजकल फिर गलत खबरों के कारण सुर्खियों में है। जलपाईगुड़ी में सम्मानित रामकृष्ण मिशन के परिसरों पर हमले हुए और राज्य में सत्तारूढ़ तृणमूल कांग्रेस-टीएससी के गुंडों ने वहां तोड़फोड़ की। दु:ख की बात है कि यह पश्चिम बंगाल में धार्मिक या आध्यात्मिक केन्द्रों पर हुआ एकमात्र हमला नहीं है। राज्य में 'इस्कान' मंदिर परिसरों पर भी टीएमसी के गुंडों ने हमले किए हैं। इसका कारण राज्य की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी द्वारा संगठन के भिक्षुओं पर यह संदेह प्रकट करना है कि वे भाजपा के हमदर्द हैं। धार्मिक व आध्यात्मिक संस्थानों पर हमले के इसी क्रम में भारत सेवाश्रम संघ-बीएसएस के मुर्शिदाबाद जिले में स्थित बेलडांगा परिसर पर हमला हुआ और उसे सत्तारूढ़ पार्टी के आक्रामक तत्वों का शिकार होना पड़ा। भारत सेवा समिति-बीएसएस क भिक्षु कार्तिक महाराज पर ममता बनर्जी ने यह आरोप लगा कर अपना गुस्सा उतारा िा कि वे मतदाताओं को भाजपा के पक्ष में प्रभावित करने का प्रयास कर रहे हैं। ममता बनर्जी का विश्वास है कि इस्कान भी ऐसी ही भूमिका निभा रहा है। इस परिघटना ने राज्य में अनावश्यक एवं अतार्किक रूप से सम्मानित धार्मिक व आध्यात्कि संस्थानों की छवि खराब करने का प्रयास किया है जिसका प्रभाव राज्य में धार्मिक सद्भावना पर पड़ सकता है।

रामकृष्ण मिशन-आरकेएम का मुख्यालय कोलकाता के बेलूर मठ में है। इस संगठन की स्थापना महान आध्यात्मिक गुरु स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने 1897 में की थी। इसे और अधिक लोकप्रिय बनाने में रामकृष्ण परमहंस के सर्वाधिक सम्मानित शिष्य स्वामी विवेकानंद ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। स्वामी विवेकानंद वास्तव में आधुनिक हिंदूवाद के वैश्विक प्रतीक थे जिन्होंने सनातन धर्म का ध्वज पश्चिमी देशों में फहरा दिया था। स्वामी विवेकानंद ने शिकागो में 1893 में आयोजित विश्व धर्म संसद में अपने ओजस्वी भाषण से अपनी वैश्विक आधात्मिक विजय का श्रीगणेश किया था। हालांकि, 'इंटरनेशनल सोसाइटी फार कृष्णा कांशसनेस'-इस्कान की स्थापना न्यूयार्क में हुई थी, पर उसके संस्थापक भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद य श्रीला प्रभुपाद का जन्म कोलकाता में हुआ था। वे 69 वर्ष की आयु में अमेरिका गए थे। उनका उद्देश्य अमेरिका समेत सारी दुनिया में भगवान कृष्ण का संदेश फैलाना था। रामकृष्ण मिशन व अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सम्मानित इस्कान जैसे सम्मानित संस्थानों पर हमला कर उनमें तोड़फोड़ करने के बारे में सोचा नहीं जा सकता और यह कृत्य अक्षम्य अपराध है।

उल्लेखनीय है कि इस्कान के दुनिया भर में 160 से अधिक मंदिर हैं और इनकी स्थापना उन देशों के नागरिकों ने की है जिनमें हिंदू प्रमुख हैं। पश्चिम बंगाल में इन सम्मानित धार्मिक व आध्यात्मिक केन्द्रों पर हुए हमलों के बारे में संदेह है कि शायद इनको उकसाने वाले हिंदू धर्म के बजाय अन्य धर्मों के अनुयाई हैं। इस प्रकार विधर्मियों द्वारा हिंदू मंदिरों व आध्यात्मिक स्थलों पर हमले से यह संदेश जाता है कि हालिया घटनायें हिंदुओं के खिलाफ गुंडागर्दी हैं। इस प्रकार हिंदुओं और उनके धर्मस्थलों पर भारत में होने वाले हमले धार्मिक रूप से आत्मघाती सिद्ध हो सकते हैं। सत्तारूढ़ दल द्वारा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इनको उकसाना धार्मिक सद्भाव के लिए भी खतरनाक है। ये हमले दो कारणों से खासकर दुर्भाग्यपूर्ण हैं। रामकृष्ण मिशन विश्वविख्यात संस्था है क्योंकि स्वामी विवेकानंद ने अपने दम पर दुनिया को हिंदूवाद की शिक्षा दी थी। इस्कान ने अनेक देशों में हिंदू मंदिरो की स्थापना को संभव बनाया है। अपने शानदार मंदिरों के माध्यम से यह संगठन 'हरे रामा, हरे कृष्णा' की पूजा तथा हिंदू जीवनशैली का प्रचार कर रहा है।

यह तथ्य भी महत्वपूर्ण है कि शताब्दियों तक दमन के बाद कुछ ही सालों से हिंदू भारत की छवि चमकने लगी है। लेकिन अब हमारे सामने पश्चिम बंगाल के सभी स्थानों से अपने मंदिरों और आश्रमों पर गुंडों और अपराधियों द्वारा हमलों की घटनायें सामने आ रही हैं। केवल लगभग एक शताब्दी पहले कांग्रेस नेता गोपाल कृष्ण गोखले ने कहा था, 'बंगाल आज जो सोचता है, भारत कल सोचेगा।' इससे स्पष्ट होता है कि बंगाल प्रांत की भूमिका नेतृत्वकारी थी। वर्तमान घटनाओं से यह सवाल उठता है कि क्या बंगाल के नेताओं को ऐसे काम करने चाहिए जिनका उद्देश्य चार या पांच निर्वाचन क्षेत्रों में सीटें जीतना हो? वर्तमान प्रकरणों को देखते हुए हमें 'रिनॉसां' या पुनर्जागरण काल को देखना चाहिए जिसका नेतृत्व समग्र रूप से बंगाल ने किया था। लेकिन इसके साथ ही हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि चैतन्य महाप्रभु ने क्या किया था जिनको बहुत से लोग भगवान कृष्ण का अवतार मानते हैं। चैतन्य महाप्रभु ने बंगाल के कम से कम एक हिस्से को 'भारत' के लिए सुरक्षित रखा था। यदि ऐसा न होता ता इस पूरे प्रांत पर पाकिस्तान का कब्जा हो जाता और यह बरबाद हो जाता। उन्होंने गरीब बंगालियों के इस्लाम में धर्मांतरण का विरोध कर उनको बचाया और आज भी वे भगवान कृष्ण की पूजा करते हैं। रामकृष्ण परमहंस भी बंगाल को ईश्वरीय उपहार की तरह थे और वे स्वयं ईश्वरीय प्रतिभा की झलक देते थे। देश को बंगाल के योगदान के बारे में बहुत कुछ कहा जा सकता है। आधुनिक भारत के महानतम कवि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर भी देश और दुनिया को बंगाल का उपहार थे। उनके द्वारा रचित गीत आज हमारा राष्ट्रगीत है।

इसी प्रकार हम बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय और उनके आत्मा को झंकृत करने वाले गीत 'वंदे मातरम' को नहीं भुला सकते हैं। वंदे मातरम भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और भारत का राष्ट्रगान बन गया। वंदे मातरम ने असंख्य क्रांतिकारियों को औपनिवेशिक राज के खिलाफ सशस्त्र क्रांति के लिए प्रेरित किया। वंदे मातरम गाते हुए असंख्य वीर फांसी के फंदे पर चढ़ कर अनन्त आध्यात्मिक यात्रा के लिए निकल गए। इस प्रकार व्यापक रूप से देखें तो बंगाल समग्र रूप से उन्नीसवीं व बीसवीं शताब्दी में भारत के महान लोगों की 'इन्साइक्लोपीडिया' बन गया। यह परिभाषित करने के लिए एक पूरे ग्रंथ की आवश्यकता होगी कि बंगाल की यह प्रतिभा कैसे कमजोर होने लगी। कला, संस्कृति, साहित्य और उद्योग की ऊंचाइयां छूने वाला बंगाल धीरे-धीरे ऐसी स्थिति में पहुंच गया जिसे अब कोई पसंद नहीं करता है।

अंग्रेजी भाषा द्वारा दुनिया को दिए सर्वोत्तम लेखकों में से एक स्वर्गीय नीरद चौधरी को यह कह कर अपना गुस्सा अभिव्यक्त करना पड़ा था कि उनके लोग 'निरर्थकता का सबसे अच्छा पुलिंदा' हैं। हालांकि, यह टिप्पणी पूरी तरह गलत नहीं थी, पर बंगाल में पले-बढ़े व अच्छी बांग्ला बोलने वाले इस लेखक का विचार है कि उनको ज्यादा सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए था। वैसे तो बंगाली होने का अर्थ पूर्णत: स्पष्ट है, पर एक समान भाषा द्वारा पैदा एकता धार्मिक दबाव का सामना करने में सफल नहीं हो सकती है। दुनिया के अनेक हिस्सों से यह महत्वपूर्ण ऐतिहासिक अनुभव हमारे सामने आता है। दु:ख की बात है कि उन्नीसवीं शताब्दी में भारत को पुनर्जागरण लाने वाली स्थिति एक त्रासद कथा में बदल गई। लेकिन इस तथ्य को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता है कि बंगाल हमेशा 'राष्ट्रवाद' के पक्ष में रहा है। जब भी ऐसा लगा कि प्रांत के रूप में पश्चिम बंगाल पीछे जा रहा है, राष्ट्रवाद की भावना ने उसे फिर से उभारने तथा आगे बढ़ाने में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। वर्तमान राजनीतिक स्थितियों में जहां चुनावी लाभ सत्तारूढ़ दल के कुछ लोगों को महान धार्मिक व आध्यात्मिक स्थलों पर हमले के लिए उकसाता है, राष्ट्रवाद एक बार फिर हमारे सामने प्रकाश रेखा की तरह है। उम्मीद है कि हमेशा की तरह बंगाल फिर वर्तमान अंधकारमय स्थितियों से बाहर निकलने में सफल होगा।

नवाचार और बुद्धिमत्ता पर एआई का प्रभाव

"आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस एक सॉफ्टवेयर प्रोग्राम है जो किसी प्रश्न का उत्तर देने के लिए पूरी तरह से पहले से दिए गए कंप्यूटर डेटा पर निर्भर करता है।"

एम जे वारसी
(लेखक, एक प्रोफेसर हैं)

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस एक एक्स-नोवो कंप्यूटर तकनीक है जो अनिवार्य रूप से मानव व्यवहार की नकल करने में सक्षम मशीनों को विकसित करने से संबंधित है। एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका एआई को एक कंप्यूटर या रोबोट की क्षमता के रूप में परिभाषित करती है जो आमतौर पर बुद्धिमान प्राणियों से जुड़े कार्यों जैसे धारणा, आलोचनात्मक सोच और निर्णय लेने को निष्पादित करती है। जहां तक मानव मस्तिष्क का संबंध है, सबसे पहले, यह सूचना को संसाधित करता है, विभिन्न कोणों से संसाधित सूचना का विश्लेषण करता है और अंत में एक तार्किक निष्कर्ष पर पहुंचता है। इसके विपरीत, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस एक सॉफ्टवेयर प्रोग्राम है जो किसी प्रश्न का उत्तर देने के लिए पूरी तरह से पहले से दिए गए कंप्यूटर डेटा पर निर्भर करता है। पूरी प्रक्रिया में, कंप्यूटर सिस्टम मानव मस्तिष्क की तरह व्यवहार करता है। एआई आज के समय की मांग है और निश्चित रूप से, संचार, रक्षा, स्वास्थ्य सेवा और कृषि में क्रांतिकारी बदलाव लाने की क्षमता रखता है। वास्तव में, हाल ही में, जिस कार्य को मशीन के लिए भी करना असंभव माना जाता था, अब एआई एक वास्तविकता बन गया है। एआई ने कंप्यूटर को मानव मस्तिष्क की नकल करने के बहुत करीब ला दिया है, जिससे मनुष्य और मशीन के बीच का अंतर कम हो गया है। आज एआई ने शिक्षा, वित्त, रक्षा, कृषि और स्वास्थ्य सेवा जैसे विभिन्न क्षेत्रों में अपना अनुप्रयोग पाया है। प्रमुख चिकित्सा अनुसंधान संस्थान घातक बीमारियों के प्रयोग, निदान, उपचार और निगरानी के लिए,ढ्ढ का उपयोग करते हैं।,ढ्ढ उच्च गुणवत्ता वाले ऊतक नमूना विश्लेषण की सुविधा प्रदान करता है जो सटीक रोगनिदान का मार्ग प्रशस्त करता है। आज के समय में दवा कंपनियां दवा की खोज और रासायनिक विश्लेषण के लिए एआई का उपयोग कर रही हैं। एआई की मदद से डॉक्टर और स्वास्थ्य सेवा पेशेवर कैंसर और स्ट्रोक जैसी गंभीर चिकित्सा स्थितियों का सटीक निदान कर सकते हैं। शिक्षा क्षेत्र में भी, एआई एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। एआई अध्ययन सामग्री, छात्र मूल्यांकन, ग्रेडिंग और निगरानी विकसित करने के लिए एक अत्यंत उपयोगी उपकरण साबित हुआ है। इस प्रकार, शिक्षक अपना कीमती समय बचाते हैं जिसका उपयोग वे उत्पादक शैक्षणिक गतिविधियों में कर सकते हैं और साथ ही छात्रों के साथ सार्थक चर्चा कर सकते हैं। एआई संचालित वर्चुअल एजुकेटर रोबोट शिक्षण और सीखने के परिणामों में काफी सुधार करते हैं।

अब आइए एआई के कुछ आसन्न खतरों को देखें। एआई के लिए तस्वीर उतनी गुलाबी नहीं है जितनी दिखती है। मानव गतिविधि के लगभग हर क्षेत्र में,ढ्ढ का व्यापक रूप से उपयोग गोपनीयता, डेटा सुरक्षा और पारदर्शिता से संबंधित कुछ गंभीर चिंताओं को जन्म देता है। मनोवैज्ञानिक कल्याण और सामाजिक मुद्दे हमारे तत्काल ध्यान के हकदार हैं। कंपनियाँ कार्यस्थल पर विशिष्ट कार्यों को करने के लिए धीरे-धीरे मनुष्यों की जगह एआई संचालित रोबोट ले रही हैं। इससे कर्मचारियों में चिंता पैदा होती है और उनके मानसिक और भावनात्मक कल्याण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कार्यस्थल पर मनुष्यों के लिए कंप्यूटर की तकनीकी निपुणता भी एक बड़ी चुनौती है। हाल ही में एआई संचालित डीपफेक वीडियो और ऑनलाइन बॉट्स खतरनाक गति से फैल रहे हैं।

डीपफेक वीडियो और ऑनलाइन बॉट्स मनगढ़ंत आम सहमति बनाने और जनता की राय में हेरफेर करने में सक्षम हैं। फर्जी खबरें जंगल की आग की तरह फैलती हैं, जिससे शांति भंग होती है और सामाजिक अशांति पैदा होती है।ढ्ढ का एक और नुकसान यह है कि यह असली और नकली के बीच अंतर करना बेहद मुश्किल बना देता है।ढ्ढ द्वारा प्रेरित मानवाधिकार उल्लंघन को जल्द से जल्द रोका जाना चाहिए।ढ्ढ संचालित बदलती प्रौद्योगिकी परिदृश्य ने डेटा सुरक्षा, गोपनीयता, सम्मान, रोजगार, समानता, राजनीतिक अधिकार और गोपनीयता को खतरे में डाल दिया है। विशेषज्ञों और समाजशास्त्रियों ने स्वास्थ्य सेवा, कानून, विपणन, लेखा, शिक्षा, प्रबंधन, प्रौद्योगिकी और कार्यस्थलों जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में एआई और मानव रोबोट पर अत्यधिक निर्भरता के हानिकारक प्रभावों के बारे में संदेह व्यक्त किया है। एआई की तकनीकी परिश्रम, अविश्वसनीय विश्लेषण शक्ति और दोहराए जाने वाले कार्यों को करने की क्षमता बड़ी छंटनी का कारण बन सकती है। नतीजतन, यह अनुपातहीन रूप से उच्च बेरोजगारी दर को जन्म देता है। कर्मचारियों और मजदूरों को भेदभाव और असमानताओं का सामना करना पड़ सकता है और उनकी पेशेवर और सामाजिक सुरक्षा दांव पर लग सकती है। एआई के दुरुपयोग को रोकने के लिए एक अच्छी तरह से परिभाषित और व्यापक तकनीकी-श्रम नीति समय की मांग है। एआई-संचालित परिदृश्य में श्रमिकों को जीवित रहने में मदद करने वाले कुछ उपाय उचित प्रशिक्षण के माध्यम से कर्मचारी कौशल का नियमित उन्नयन, तकनीकी कौशल को निखारना और सॉफ्ट स्किल विकसित करना हैं।

आइए इस तथ्य को नज़रअंदाज़ न करें कि एआई पूरी तरह से मानवीय स्वभाव, समझ और रचनात्मकता से रहित है। मानव मस्तिष्क में अनंत रचनात्मक शक्ति और उच्च क्रम की सोच कौशल का आशीर्वाद है। ये सर्वोच्च गुण मनुष्य को एक ऊंचे स्तर पर ले जाते हैं और उन्हें मशीनों से भी ऊंचे स्थान पर रखते हैं। इसके विपरीत,एआई डेटा-चालित है और एक निर्धारित प्रक्षेपवक्र का अनुसरण करता है, इस प्रकार, मानवीय भावनाओं, धारणा और किसी दिए गए वातावरण के अनुकूल कार्य करने की क्षमता को पकड़ने में विफल रहता है।

चूंकि एआई अपने प्रारंभिक चरण में है, इसलिए यह मान लेना जल्दबाजी होगी कि एआई जल्द ही मनुष्यों पर हावी हो जाएगा क्योंकि मनुष्य मौलिकता और नवाचार के मूल में बने हुए हैं।

आप की बात

घटता परिवारवाद

मतदाता अब जागरूक हो गए हैं और वे पारिवारिक राजनीतिक दलों को सत्ता सौंपने में अपनी रूचि कम करते जा रहे हैं। कभी नेहरू-गांधी की कांग्रेस देश में एक छत्र राज करती थी। अब वह क्षेत्रीय दलों से अपना हाथ मिलाने को मजबूर हो रही है। अखिलेश यादव की समाजवादी पार्टी की दशा भी खराब है। यूपी में सालों सत्ता में रही सपा को अब सत्ता पाने के लाले लग गए हैं। ऐसी ही हालत मायावती की बहुजन समाज पार्टी की हो गई है। एनसीपी भी कमजोर हो रही है क्योंकि चाचा-भतीजे अलग हो गए हैं और ननद-भौजाई सुप्रिया सुले व सुनेत्रा पवार बारामती में आमने-सामने आ गई हैं। बाला साहेब ठाकरे की शिवसेना दो भागों में बंट कर कमजोर हो गई है। झारखण्ड में भी शिबू सोरेन की झामुमो कमजोर हो गई है। जहाँ परिवारवाद चला, वहां राजनीतिक पार्टियां टूटकर कमजोर हो रही हैं। इसके साथ ही घोटाले भी बढ़ते जा रहे हैं। ममता की तृणमूल कांग्रेस भी परिवारवाद के कारण आने वाले समय में कमजोर हो सकती है। भाजपा परिवारवाद से मुक्त है, इसलिए वह इसके खिलाफ खुलकर बोल रही है तथा राष्ट्रीय स्तर पर मजबूत भी होती जा रही है। परिवारवाद कमजोर होने की परिघटना भारत में लोकतंत्र के विस्तार व मजबूती का रास्ता खोल रही है।

– **शकुंतला महेश नेनावा,** इंदौर

भयानक गर्मी

राजधानी दिल्ली में बुधवार को गर्मी ने सारे रिकॉर्ड तोड़ दिए। दिल्ली के मुंगेशपुर इलाके में अधिकतम तापमान 52.9 डिग्री सेल्सियस दर्ज किया गया। यह राष्ट्रीय राजधानी में अब तक दर्ज किया गया सर्वाधिक तापमान है। मुंगेशपुर में मंगलवार को अधिकतम 49.9 डिग्री सेल्सियस तापमान दर्ज किया गया था। मौसम विभाग की वेबसाइट के अनुसार एक दिन बाद तापमान में और इजाफा हुआ और मौसम विज्ञान केंद्र ने शाम चार बजकर 14 मिनट पर अधिकतम तापमान 52.9 डिग्री सेल्सियस दर्ज किया। मौसम विभाग के महानिदेशक डा. एम महापात्रा के अनुसार, मौसम विभाग दिल्ली के मुंगेशपुर स्वचालित मौसम स्टेशन में लगे तापमान सेंसर की जांच कर रहा है कि वह ठीक से काम कर रहा है या नहीं। मौसम विभाग की यह सतर्कता ठीक हो सकती है, पर अब समय आ गया है कि भारत के जिम्मेदार अधिकारी सर्वोच्च स्तर पर ग्लोबल वार्मिंग की सबसे खतरनाक परिस्थितियों का आंकलन कर उसके अनुसार उपयुक्त रणनीति का रोडमैप तैयार करें। भारत सरकार को राज्य सरकारों ही नहीं स्थानीय निकायों से मिल कर जलवायु परिवर्तन के कारण हो रहे संभावित प्रभावों और भावी जोखिमों का लेखाजोखा रखना चाहिए।

– **जंग बहादुर सिंह,** जमशेदपुर

पाकिस्तानी धमकी

पाक सेना ने पहली बार ऐलान किया है कि उसके अणु बम हमले के लिए तैयार हैं ओर उसने पहले प्रयोग नहीं की रणनीति भी नहीं स्वीकार की है। इस प्रार उसने भारत को एक बार फिर धमकाया है। हाल ही में पूर्व पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ ने कहा था कि पाकिस्तान ने भारत के साथ किये समझौते को तोड़ा था जो उचित नहीं था। इसके बाद पाकिस्तानी सैन्य अधिकारी कह रहे हैं कि परमाणु बम के मामले में उनकी कोई नो फर्स्ट नीति नहीं है। इस धमकी को देखते हुए अब भारत को अपनी नो फर्स्ट नीति वापस लेने पर विचार करना चाहिए। वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय माहौल में न केवल पाकिस्तान बल्कि चीन भी अपने परमाणु हथियारों की संख्या बढ़ा कर उनको तैनात कर रहा है। ऐसे में भारत को भी अपनी नाभिकीय आयुध व मिसाइल क्षमता का विस्तार कर उनको अद्यतन बनाने के प्रयास तेज करने चाहिए। भारत को अपना रक्षा खर्च भी बढ़ाना चाहिए जो चीन की तुलना में बहुत कम है। पाकिस्तान अब पूरी तरह चीन का मुहरा बन चुका है, इस प्रकार भारत को दो मोर्चों पर युद्ध की तैयारी करनी होगी। इस स्थिति में राहुल गांधी द्वारा सेना की अग्निवीर योजना की निरर्थक व अतार्किक आलोचना देश के लिए आत्मघाती सिद्ध हो सकती है।

सुभाष बुडावन वाला, रतलाम

जजों की छुट्टियां

भारत में न्यायाधीशों पर काम का बोझ बहुत अधिक है। ऐसे में उनकी छुट्टियों को लेकर उठाए गए सवालों का गहन विश्लेषण जरूरी है। भारतीय न्यायपालिका अधिकांश दिना सक्रिय रहती है, फिर भी लंबित मामलों की संख्या बढ़ती जा रही है। इसका मुख्य कारण न्यायाधीशों की कमी और बुनियादी ढांचे का अभाव है। कार्यदिवस के बाद भी जज अपना काम जारी रखते हैं, फाइलें पढ़ते हैं और फैसले लिखते हैं। स्पष्ट है कि न्यायाधीशों की छुट्टियां मानसिक और शारीरिक आराम के लिए आवश्यक होती हैं। लंबित मामलों की समस्या का समाधान जजों की छुट्टियां कम करने के बजाय न्यायपालिका को पर्याप्त संसाधन और बुनियादी ढांचे की जरूरत है। सरकार को न्यायाधीशों की संख्या बढ़ाने पर ध्यान देना चाहिए क्योंकि वर्तमान में प्रति 10 लाख जनसंख्या पर केवल 21 न्यायाधीश हैं, जबकि विधि आयोग ने 1987 में ही प्रति 10 लाख नागरिकों पर 50 जजों का सुझाव दिया था। इसके अलावा अदालतों में सुविधाओं का विस्तार और तकनीकी साधनों का उपयोग करके न्यायिक प्रक्रिया को तेज किया जा सकता है।

– **अवनीश गुप्ता,** आजमगढ़

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से responsemail.hindipioneer@gmail.com पर भी भेज सकते हैं।

दैनिक जागरण

अंतर्मन की आवाज सदैव सही राह दिखाती है

सड़क हादसों की अनदेखी

जम्मू-कश्मीर में अखनूर के पास एक बस के गहरी खाई में गिरने से 20 से अधिक श्रद्धालुओं की मौत फिर से यह बता रही है कि अपने देश में किस तरह आए दिन होने वाली सड़क दुर्घटनाओं में लोग बड़ी संख्या में अपनी जान गंवाते हैं। इस बस दुर्घटना का कारण यह माना जा रहा है कि ड्राइवर या तो तेज रफ्तार से बस चला रहा था, जिसके चलते वह सामने से आती कार को बचाने में अपना नियंत्रण खो बैठा या फिर उसे झपकी आ गई होगी। दुर्घटना का मूल कारण कुछ भी हो, जो लोग अपनी जान गंवा बैठे, उन्हें वापस नहीं लाया जा सकता। यह ठीक है कि राहत एवं बचाव कार्य तुरंत शुरू कर दिया गया और इस हादसे पर राष्ट्रपति समेत प्रमुख नेताओं ने अपनी संवेदनाएं व्यक्त कीं, लेकिन यह प्रश्न तो अनुत्तरित ही है कि सड़क दुर्घटनाओं को रोकने के ठोस उपाय कब किए जाएंगे? बार-बार यह तथ्य सामने आ रहा है कि भारत में कहीं अधिक सड़क दुर्घटनाएं हो रही हैं और उनमें बड़ी संख्या में लोग जान गंवाने के साथ जख्मी भी हो रहे हैं, लेकिन ऐसे कोई उपाय नहीं किए जा रहे हैं, जिनसे सड़क हादसों पर प्रभावी ढंग से लगाम लगे।

चूंकि सड़क हादसे रोकने के आवश्यक उपाय नहीं किए जा रहे हैं, इसलिए उनमें मरने वालों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है। नवीनतम आंकड़ों के अनुसार 2022 में सड़क दुर्घटनाओं में एक लाख 68 हजार लोगों की जान गई। सड़क दुर्घटनाओं में होने वाली मौतों के मामले में भारत दुनिया में तीसरे स्थान पर है, जबकि अन्य देशों के मुकाबले अपने देश में कहीं कम संख्या में वाहन हैं। मार्ग दुर्घटनाओं के कारण किसी से छिपे नहीं। यातायात नियमों का उल्लंघन, खटारा वाहन, अकुशल चालक सड़क हादसों के मूल कारण हैं। ये ऐसे कारण नहीं, जिनका निवारण न किया जा सके, लेकिन दुर्भाग्य से इस ओर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। परिणाम यह है कि देश के किसी न किसी हिस्से में करीब-करीब प्रतिदिन कोई न कोई बड़ा सड़क हादसा होता है और उसमें लोग मारे जाते हैं अथवा गंभीर रूप से घायल होते हैं। शासन-प्रशासन इन हादसों पर शोक संवेदना जताकर कर्तव्य की इतिश्री तो कर लेता है, लेकिन यह देखने से इन्कार करता है कि उन्हें रोका जा सकता है और रोका जाना चाहिए। सड़क दुर्घटनाओं में मरने वाले अधिकांश लोग अपने घर के कमाऊ सदस्य होते हैं। उनके न रहने से परिवार विशेष को ही क्षति नहीं पहुंचती, बल्कि समाज और राष्ट्र भी किसी न किसी रूप में कमजोर होता है। विश्व बैंक के एक आकलन के अनुसार देश का सकल घरेलू उत्पाद अभी जितना है, उसमें हर साल तीन प्रतिशत की और बढ़ोतरी होती, यदि भारत में सड़क दुर्घटनाओं में इतने अधिक लोगों की जान न जाती।

जलस्रोतों का संरक्षण

संकल्प को सिद्धि तक पहुंचाने के लिए सामूहिक रूप से प्रयास हों तो वे सफल होते ही हैं। उत्तराखंड के पौड़ी जिले के कठूड़ गांव में प्राकृतिक जलस्रोत को नवजीवन देने की ग्रामीणों की पहल इसका उदाहरण है। निरंतर प्रयासों का प्रतिफल है कि गांव को जलापूर्ति करने वाले इस स्रोत में अविरल धारा बहने लगी है। जल संकट को दूर करने को राज्य में ऐसे प्रयासों की आवश्यकता है। दरअसल, पानी का संकट उत्तराखंड में कम नहीं है। परिस्थितियां इसे उजागर भी कर रही हैं। उत्तराखंड जल संस्थान के आंकड़े बताते हैं कि राज्य में पांच सौ के लगभग ऐसे जलस्रोत हैं, जिनमें पानी का प्रवाह 10 से लेकर 90 प्रतिशत तक घटा है। नीति आयोग की पूर्व में आई रिपोर्ट बताती है कि प्रदेश में 300 के लगभग जलधाराएं सूख चुकी हैं अथवा सूखने के कगार पर हैं। ऐसे में स्थिति का सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है। पानी के संकट से निजात पाने को आवश्यक है कि यहां जल संरक्षण और वर्षा जल संग्रहण पर विशेष रूप से ध्यान केंद्रित किया जाए। यद्यपि, सरकार ने इस दिशा में सारा यानी स्प्रिंग एंड रिवर रिज्युविनेशन अथारिटी का गठन किया है, जो एकीकृत रूप से वर्षा जल संग्रहण के उपायों के साथ ही जल संरक्षण में सहायक पौधों का रोपण भी कराएगी। इसके लिए सारा ने तैयारियों को अंतिम रूप दे दिया है और अगले माह से इसकी शुरुआत होने जा रही है। कहने का आशय यह कि सरकार तो अपने स्तर से प्रयास करेगी ही, आमजन को भी सजग रहते हुए इसमें अपनी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करनी होगी। पौड़ी के कठूड़ गांव के साथ ही उफरैंखाल समेत अन्य स्थानों पर हुई जल संरक्षण की अनुपम पहल को व्यापक स्वरूप देने की जरूरत है। सरकार को चाहिए कि वह ऐसे प्रयासों को अधिक महत्व दे। साथ ही आमजन को भी समझना होगा कि बेहतर भविष्य के लिए जल संरक्षण में सक्रिय भागीदारी निभाई जाए।

प्राकृतिक जलस्रोतों के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता है

नागरिक कर्तव्यों में शामिल हो मतदान

प्रो. रसाल सिंह

लोकतंत्र की मूल भावना अधिकतम लोगों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना है। कम मतदान से यह भावना प्रश्नांकित होती है

अवधेश राजपूत

आम चुनाव के आरंभिक दो चरणों में हुए कम मतदान ने अनिवार्य मतदान संबंधी प्रस्ताव पर बहस को हवा दी। हालांकि चुनाव आयोग द्वारा थोड़े विलंब से जारी किए गए अंतिम आंकड़ों ने घटते मतदान की चिंता को कुछ कम किया है। इसके बाद मतदान के आंकड़ों में पिछले चुनावों की तुलना में बहुत ज्यादा अंतर नहीं दिख रहा है। आरंभिक दो चरणों के बाद मतदान प्रतिशत बढ़ाने में चुनाव आयोग द्वारा चलाए गए जागरूकता अभियान, प्रधानमंत्री मोदी द्वारा बार-बार की गई अपील और विभिन्न संगठनों तथा समाज के प्रबुद्ध वर्ग द्वारा किए गए जनजागरण की अहम भूमिका रही। इसके बावजूद कुल मतदान प्रतिशत उत्साहजनक नहीं है। व्यापक मतदान लोकतंत्र की स्वीकार्यता, सशक्तता और गतिशीलता की आधारभूत शर्त है। भारतीय लोकतंत्र को इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए काफी प्रयास करने होंगे।

मतदान को बढ़ाने के लिए कुछ 'थिंक टैंक' पश्चिमी देशों का उदाहरण देते हुए मतदान को अनिवार्य बनाने का सुझाव देते हैं, लेकिन मतदान की अनिवार्यता लोकतंत्र की मूलभावना के विरुद्ध है। यह संविधानप्रदत्त स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार का अतिक्रमण होगी। इसे नागरिक कर्तव्यों में अवश्य शामिल किया जा सकता है। मतदान प्रतिशत बढ़ाने संबंधी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मतदान को अनिवार्य बनाने की जगह कम मतदान के कारणों को चिह्नित करने और उनका व्यावहारिक समाधान करना कहीं अधिक उपयुक्त होगा। अपेक्षित मतदान न होने के कारणों की पड़ताल की जाए तो रोजगार के चलते अपने गांव-शहर से दूर किसी अन्य स्थान पर अस्थायी रूप से रहने वालों की संख्या भारत में बहुत अधिक है। मतदान के लिए उनका अपने गांव-घर आगमन संभव नहीं हो पाता। उनकी अनुपस्थिति मतदान प्रतिशत को प्रभावित करती है। उदारीकरण के बाद यह प्रक्रिया बहुत अधिक बढ़ी है। सैन्य बल और अर्धसैनिक बल के रूप में कार्यरत लाखों भारतीयों को अपने कार्यस्थल से ही मतदान की सुविधा है। ऐसे में यह सुविधा सभी प्रवासी मतदाताओं को दिए जाने के विकल्प पर विचार किया जाना चाहिए, क्योंकि उनके समक्ष न केवल किराए-भाड़े के खर्चे, बल्कि कार्यस्थल से अवकाश लेने की चुनौती भी होती है।

देश में काफी बड़ी संख्या ऐसे लोगों की भी है, जो मतदान के महत्व से अनभिज्ञ हैं। वे मानते हैं कि उनके मतदान करने या न करने से कोई फर्क नहीं पड़ने वाला। ऐसे लोगों की संख्या भी काफी अधिक है जो संदेहवादी या यथास्थितिवादी हो गए हैं। ऐसे नागरिकों को व्यवस्था परिवर्तन से कोई उम्मीद नजर नहीं आती या फिर उनके हिसाब से जैसा चल रहा है वैसा ही ठीक है। ऐसे मनोभावों ने उनमें मतदान के प्रति अरुचि पैदा की है। यह दृष्टिकोण नकारात्मक है, क्योंकि सभी दलों और नेताओं को एकसमान नहीं माना जा सकता। फिर भी इसका दारोमदार नेताओं और राजनीतिक दलों पर ही है कि आखिर ऐसी धारणा बनती ही क्यों है। इसलिए उन्हें आत्ममंथन करना चाहिए। लोकतंत्र आज अपराधियों, भ्रष्टाचारियों और धन-पशुओं के शिकंजे में फंसता जा रहा है। प्रत्याशियों के चयन हेतु दल सिर्फ 'जिताऊ क्षमता' को पैमाना मानते हैं। प्रत्याशी की योग्यता, आचार-व्यवहार, सामाजिक-राजनीतिक प्रतिबद्धता का कोई खास मूल्य-महत्व नहीं रह गया। राजनीतिक विमर्श और चुनाव प्रचार में प्रयुक्त भाषा एवं भाव-भंगिमा का भी ह्रास होता जा रहा है।

मौसम की मार से भी मतदान प्रभावित होता है। गर्मियों के महीनों की चिलचिलाती धूप और चढ़ते पारे के कहर ने भी मतदान को प्रभावित किया है। यह भी सही है कि देश में पहली बार इस मौसम में चुनाव नहीं हो रहे। फिर भी इसका असर तो पड़ता ही है। ऐसे में, चुनाव के लिए एक उपयुक्त मौसम चिह्नित करना होगा, लेकिन भारत की विविधता को देखते हुए यह अपने आप में एक बड़ी चुनौती है। फिर भी दीपावली के आसपास का समय अधिकांश भारतीयों के लिए अनुकूल होगा। बड़ा त्योहार होने के कारण इस अवसर पर प्रवासी प्रायः अपने गांव-घर आते हैं। कम चरणों में मतदान कराते हुए एक बड़ा चरण दीपावली के ठीक पहले और दूसरा बड़ा चरण दीपावली के ठीक बाद कराने से मतदान में बढ़ोतरी हो सकती है। इसके अलावा सरकारों, गैर-सरकारी संगठनों व्यापारिक प्रतिष्ठानों-औद्योगिक इकाइयों आदि को मतदान करने वाले जागरूक नागरिकों के लिए विविध लाभ, छूटें और सहूलियतें प्रदान करनी चाहिए। निश्चय ही ये योजनाएं नागरिकों को मतदान के लिए प्रोत्साहित करेंगी। व्यापक सामाजिक प्रभाव वाले सेलेब्रिटीज, इंटरनेट मीडिया इनफ्लुएंसरों, स्वयंसेवी संगठनों और शिक्षण संस्थानों आदि को भी नागरिकों को मतदान के महत्व के प्रति जागरूक करना चाहिए। इन सबकी सक्रिय भूमिका और भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए चुनाव आयोग को व्यापक योजना बनानी चाहिए।

पिछले दिनों केंद्र सरकार ने चुनाव सुधार की दिशा में एक निर्णायक पहल करते हुए मतदाता पहचान-पत्र को आधार कार्ड से जोड़ने, पंचायत/निकाय चुनावों और विधानसभा/लोकसभा चुनावों की मतदाता सूचियों को एक करने जैसे महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। मतदाताओं के नाम के दोहराव और मतदाता सूचियों के दोहराव को रोकने के लिए किए गए प्रविधानों की तरह चुनाव-प्रक्रिया के दोहराव को रोकने की दिशा में भी काम किया जाना चाहिए। इस दिशा में एक देश-एक चुनाव प्रभावी समाधान हो सकता है। बार-बार होने वाले मतदान की जगह पांच साल में एक बार होने वाले मतदान के लिए लोग अतिरिक्त श्रम, समय और संसाधन लगाकर भी मतदान के लिए आगे आएंगे और उससे मतदान प्रतिशत में बढ़ोतरी होने के भरे-पूरे आसार हैं।

मतदान बढ़ाने की दिशा में प्राथमिकता के आधार पर प्रयासों की आवश्यकता है। मतदान लोकतांत्रिक प्रक्रिया का मूल आधार है। यह लोकतांत्रिक प्रक्रिया में नागरिकों के दृढ़विश्वास और गहरी आस्था का परिचायक है। इस भाव के अभाव में लोकतंत्र न तो सुरक्षित रह सकता है और न ही परिपक्व और विकसित हो सकता है। लोकतंत्र की मूल भावना अधिकतम लोगों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना है। कम मतदान से लोकतंत्र की यह मूल भावना प्रश्नांकित होती है।

(लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय के किरोड़ीमल कालेज में प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

महंगे होते चुनावों से मिले मुक्ति

डा. सुरजीत सिंह

देश को प्रगतिपथ पर ले जाने के लिए चुनावों में होने वाले बेतहाशा खर्च को कम करने की भी जरूरत है

लोकसभा चुनाव अब अपने अंतिम पड़ाव पर पहुंच गया है। लगभग 97 करोड़ मतदाताओं के लिए चुनावी प्रक्रिया को सकुशल संपन्न कराना किसी बड़ी उपलब्धि से कम नहीं है। इसके लिए बड़े पैमाने पर मतदान केंद्रों की व्यवस्था करना, चुनाव कर्मचारियों और सुरक्षा बलों की तैनाती करना, ईवीएम की खरीद एवं रखरखाव, प्रशिक्षण, विज्ञापन, वीडियोग्राफी और प्रशासन आदि पर भारी व्यय करना पड़ता है। इसके बावजूद चुनाव में होने वाला यह व्यय कुल खर्च का लगभग 20 प्रतिशत ही होता है। इसमें राजनीतिक पार्टियों और उम्मीदवारों के खर्च को भी जोड़ दिया जाए, तो यह खर्च बहुत ज्यादा हो जाता है।

वर्ष 2019 के चुनाव में लगभग 60 हजार करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान था, जबकि इससे पहले 2014 में लगभग 30 हजार करोड़ रुपये खर्च हुए थे। सेंटर फार मीडिया स्टडीज की नवीनतम रिपोर्ट के अनुसार 2024 के लोकसभा चुनाव में लगभग 1.20 लाख करोड़ रुपये से ज्यादा खर्च होंगे। इसमें विधानसभा चुनावों में होने वाले व्यय को शामिल कर लिया जाए तो यह राशि दोगुने से भी अधिक हो जाती है। यह कई देशों की जीडीपी के बराबर है तो पाकिस्तान के कुल सालाना बजट के एक तिहाई से भी ज्यादा है। वर्ष 1952 में होने वाले देश के पहले लोकसभा चुनाव में प्रति व्यक्ति खर्च छह पैसे था, जो साल 2014 के चुनाव में बढ़कर करीब 47 रुपये पहुंच गया। इस बार यह बढ़कर लगभग 52 रुपये हो जाने का अनुमान है। जबकि इस दौरान देश की आबादी भी खासी बढ़ी है। खर्चीले चुनावों के मामले में केवल अमेरिका ही भारत से आगे है।

यह भी सच है कि भारत में चुनावों पर होने वाले वास्तविक खर्च और आधिकारिक तौर पर दिखाए गए खर्चों में काफी अंतर होता है। चुनाव आयोग ने लोकसभा उम्मीदवारों के खर्च की सीमा 95 लाख रुपये निर्धारित की है। इसके बावजूद राजनीतिक दल और उम्मीदवार एक-एक सीट और एक-एक वोट के लिए पैसे को पानी की तरह बहाते हैं। टिकट मिलने से लेकर चुनाव लड़ने की प्रक्रिया तक, उम्मीदवार यह मानकर चलता है कि यह करोड़ों का 'प्रोजेक्ट' है जिसमें छिपी लागतें जैसे-उपहार, खानपान, नकदी और शराब आदि का भारी व्यय शामिल रहता है। इस बार भी प्रचार, विज्ञापन, इंटरनेट मीडिया आदि माध्यमों द्वारा उम्मीदवारों ने अपनी ब्रांडिंग करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। एक अनुमान के अनुसार 2019 के चुनावों में उम्मीदवारों के कुल व्यय में से 20 से 25 प्रतिशत सीधे मतदाताओं के पास गए। प्रचार अभियान, प्रचार सामग्री, रैली और यात्रा आदि पर लगभग 30 से 35 प्रतिशत व्यय किया था। वहीं आठ से 10 प्रतिशत व्यय लाजिस्टिक पर एवं 10 प्रतिशत व्यय अन्य विविध मदों पर किया गया था।

समय के साथ खर्चीले होते जा रहे चुनाव। फाइल

चुनावों में बेतहाशा खर्च रोकने के लिए जनप्रतिनिधि कानून बनाया गया है। इसकी धारा 77(1) के तहत प्रत्येक उम्मीदवार को चुनावी खर्च का सही हिसाब-किताब चुनाव आयोग को देना होता है। यदि उम्मीदवार कोई गलत ब्योरा देता है, तो उस पर तीन साल तक चुनाव लड़ने का प्रतिबंध लगाया जा सकता है। ऐसा कानून होने और चुनाव आयोग की निगरानी के बाद भी सभी उम्मीदवार बहुत बड़ी राशि चुनावों पर व्यय करते हैं। इस खर्च का अधिकांश हिस्सा अज्ञात रहता है। प्रश्न यह है कि भारत जैसे विकासशील देश में चुनावी आयोजनों पर उम्मीदवारों द्वारा इतना पैसा बहाना कहां तक उचित है। यह शोध का विषय होना चाहिए कि विभिन्न उम्मीदवारों के चुनावी व्यय और उसे मिलने वाले वोटों में क्या सहसंबंध हैं। आज जब प्रत्येक मतदाता इंटरनेट मीडिया से जुड़ा हुआ है, उसने अपना मन पहले से ही बना रखा होता है, तो इस प्रकार के व्यर्थ खर्चों का कोई औचित्य समझ में नहीं आता। चुनावी व्यय कितना ज्यादा है, इसे समझने के लिए यह उदाहरण काफी है कि 18वीं लोकसभा के चुनावों पर जो व्यय किया गया, उससे सरकार लगभग आठ महीने तक फ्री में राशन बांट सकती थी। सरकार 80 करोड़ गरीबों को तीन महीने मुफ्त अनाज देने पर लगभग 46 हजार करोड़ रुपये व्यय करती है। इस समस्या का निदान किया जाना चाहिए। जब भारत में धन का हस्तांतरण सुविधाजनक बनाया जा सकता है तो चुनाव आयोग को सुरक्षित आनलाइन वोटिंग पर भी विचार करना चाहिए। इससे न सिर्फ चुनाव अवधि कम होगी, बल्कि चुनाव भी सुविधाजनक होंगे और मतदान प्रतिशत भी बढ़ेगा।

इस धारणा को समाप्त करने के लिए समाज के शिक्षित युवाओं एवं अच्छा काम करने वालों को आगे आना होगा कि चुनाव केवल धन से ही लड़ा जा सकता है। इसके साथ एक देश-एक चुनाव पर गहनता से विचार किया जाना चाहिए। एक साथ चुनाव होने पर दलों का चुनावी खर्च पर्याप्त रूप से कम हो जाएगा। चुनाव आयोग को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि दलों एवं उम्मीदवारों को मिलने वाले धन एवं उसके व्यय में पारदर्शिता हो। सभी चुनावों के लिए एक ही मतदाता सूची का उपयोग किए जाने से मतदाता सूची को अद्यतन करने में लगने वाले समय और धन की भी बचत होगी। स्कूल, कालेज और अन्य विभागों के सरकारी कर्मचारियों का समय और काम बार-बार प्रभावित नहीं होगा। एक ही बार चुनाव होने से समाज में कलह पैदा करने वाले मुद्दे भी कम उठेंगे।

नई सरकार को चुनावी व्यय में पारदर्शिता लाने के लिए विभिन्न दलों के साथ मिलकर सुधारात्मक उपायों पर विचार करना चाहिए। चुनाव आयोग को भी आवश्यकतानुसार चुनावी सुधारों पर कार्य करना होगा। आशा है कि नई सरकार देश को प्रगति पथ पर ले जाने के लिए चुनावों पर होने वाले व्यर्थ के व्यय को कम करके देश के लोगों का धन देश के विकास पर ही व्यय करने की दिशा में आगे बढ़ेगी।

(लेखक अर्थशास्त्री हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

आत्ममुग्धता

'मैंने सभी शास्त्रों का अध्ययन कर लिया। पूजा-पाठ भी बहुत करता हूं। लगातार कई दिनों तक बिना अन्न-जल के व्रत रहता हूं। जरूरतमंदों को दान करता हूं। जब मेरे पास किसी को लाभ पहुंचाने की क्षमता थी तब सबकी मदद करता था, किसी से खुद कुछ मांगता नहीं था, स्वेच्छा से जो कुछ दे देता था, उसे प्रसाद मान कर रख लेता था।' प्रायः इसी से मिलती-जुलती बातें सामर्थ्यवान लोगों के मुंह से सुनने को मिलती हैं। अधिकांश लोगों द्वारा अपने अधीनस्थ तथा अशक्त लोगों के समक्ष ही आत्मप्रशंसा के पुल बांधे जाते हैं, जो सिर्फ 'हां में हां' मिलाने के अलावा कुछ और बोल नहीं सकते। ऐसे लोगों से यदि कोई पूछ बैठे कि पूजा-पाठ, व्रत-उपवास के बखान कर बदले में सम्मान पाने की आकांक्षा तो नहीं? इस पर वे भीतर ही भीतर तिलमिला जाते हैं, लेकिन सफाई में प्रायः यही बातें कहते हैं कि भगवान ही सब कुछ है, उसी की कृपा से ही सुखमय जीवन मिला है।

यदि मनोविज्ञान की दृष्टि से आत्मप्रशंसा करने वालों की विवेचना की जाए तो यह प्रवृत्ति मन की हीनता को ही दर्शाती है। आत्मप्रशंसा इसलिए की जाती है, ताकि वाहवाही मिलती रहे जिससे आंतरिक सुख मिले, क्योंकि सभी का अंतर्मन सम्मान पाने को लालायित रहता है। यह ध्यान रखना चाहिए कि जब खुद 'अपने मुंह मियां मिट्ठू' बनने की आदत पड़ जाती है और इसके बल पर सम्मान मिलने लगता है तो उसे बनाए रखने के लिए कुछ क्षति भी उठानी पड़ सकती है। इससे ज्यादा खतरा अहंकार बढ़ने का भी होता है। अहंकार का परिणाम घातक इसलिए होता है, क्योंकि अहंकारी व्यक्ति स्वयं को सर्वश्रेष्ठ मानने लगता है। ऐसी स्थिति में वह लोगों से घुलमिल नहीं पाता। जीवन में अहंकार पैदा करने वाली स्थितियों से दूरी बनानी चाहिए। आत्ममुग्धता दुर्लभ जीवन को पथभ्रष्ट करने का काम करती है।

सलिल पांडेय

प्राणघातक बीमारियों से बचाव

श्वेता गोयल

धूमपान एक अत्यंत धीमा किंतु प्राणघातक विष है, इसलिए स्वयं तो इससे बचें ही, इसके आदी लोगों को भी इस लत को छोड़ने के लिए प्रेरित करें

धूमपान एक ऐसा धीमा जहर है, जो धीमे-धीमे इसका सेवन करने वाले व्यक्ति का दम घोंटता है। धूमपान शरीर में धीरे-धीरे प्राणघातक बीमारियों को जन्म देता है और व्यक्ति को धीमी गति से मृत्यु शैया तक पहुंचा देने का माध्यम बनता है। तंबाकू सेवन के प्रसार और नकारात्मक स्वास्थ्य प्रभावों की ओर ध्यान आकर्षित करने के उद्देश्य से प्रतिवर्ष 31 मई को 'विश्व तंबाकू निषेध दिवस' मनाया जाता है। एक ओर जहां विकासशील देशों में धूमपान का प्रचलन बढ़ रहा है, वहीं अमेरिका सरीखे कुछ विकसित देशों में धूमपान के प्रचलन में तेजी से गिरावट आई है। वर्ष 1965 में अमेरिका की 42 प्रतिशत आबादी धूमपान की आदी थी, जबकि 1991 में यह संख्या घटकर 26 प्रतिशत रह गई और पिछले डेढ़ दशक में तो वहां धूमपान करने वालों की संख्या में और भी तेजी से गिरावट आई है। अमेरिका में सिगरेट की खपत में लगातार कमी आने की वजह से अमेरिका की तंबाकू कंपनियों ने अपने घाटे की पूर्ति के लिए अपने तंबाकू उत्पादों को भारत तथा अन्य विकासशील देशों में खपाने की योजना बनाई और उसे इस कार्य में सफलता भी मिली।

भारत में धूमपान के कारण रोजाना मरने वालों की संख्या सड़क दुर्घटनाओं में होने वाली मौतों की तुलना में लगभग 20 गुना अधिक है। इससे भी भयावह आंकड़ा यह है कि लगभग 10 प्रतिशत व्यक्ति तो ऐसे होते हैं, जो खुद धूमपान नहीं करते, लेकिन पैसिव स्मोकिंग के शिकार बनते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन का अनुमान है कि यदि विकासशील देशों में धूमपान की लत इसी गति से बढ़ती रही, तो आगामी दो वर्षों में ही धूमपान की वजह से 50 करोड़ से भी ज्यादा लोग मारे जा चुके होंगे और अगले 30 वर्षों में केवल गरीब देशों में ही धूमपान से मरने वालों की संख्या प्रतिवर्ष 10 लाख से बढ़कर 70 लाख तक पहुंच जाएगी। आंकड़ों से यह भी पता चलता है कि सभी प्रकार के कैंसर में 40 प्रतिशत का कारण धूमपान ही होता है।

विभिन्न अध्ययनों के मुताबिक सिगरेट के धुएं में करीब चार हजार घातक रासायनिक तत्व विद्यमान होते हैं, जो मानव शरीर पर तरह-तरह से दुष्प्रभाव डालते हैं। यूनिवर्सिटी आफ कैलिफोर्निया के शोधकर्ताओं के अनुसार, एक व्यक्ति द्वारा पी गई प्रत्येक सिगरेट उसके जीवन के 11 मिनट तक कम कर देती है। इस प्रकार कोई व्यक्ति प्रतिदिन यदि एक पैकेट सिगरेट पीता है तो इससे उसका जीवन करीब दो महीने कम हो जाता है।

बहरहाल, तमाम स्वास्थ्य विशेषज्ञों और शोधों का एक स्वर में यही कहना है कि धूमपान एक अत्यंत धीमा, किंतु प्राणघातक विष है, इसलिए स्वयं तो धूमपान से बचें ही, इसके आदी लोगों को भी इस लत को छोड़ने के लिए प्रेरित करें।

(लेखिका शिक्षिका हैं)

राष्ट्रीय एकता-अखंडता में बाधक घुसपैठिए

'घुसपैठ की समस्या' शीर्षक से प्रकाशित संपादकीय टिप्पणी में जनसांख्यिकीय परिवर्तन से उत्पन्न खतरों के बारे में देशवासियों को आगाह किया गया है। बताया गया है कि ये घुसपैठिए पूर्वोत्तर के सीमावर्ती जिलों की जनसांख्यिकी को ही प्रभावित नहीं कर रहे हैं, बल्कि इन्होंने सुदूर हैदराबाद और जम्मू तक में अपना बसेरा बना लिया है। इस समस्या पर सुप्रीम कोर्ट भी चिंता जता चुका है। बावजूद इसके देश के कुछ दलों को इन घुसपैठियों में कोई खतरा नजर नहीं आता है। वे तो सुप्रीम कोर्ट के फैसले की भी परवाह नहीं कर रहे हैं जबकि इस चुनाव में संविधान बचाने को लेकर हंगामा इन्हीं दलों द्वारा मचाया गया। ऐसे में सवाल उठता है कि संविधान की दुहाई देने वाले दल संवैधानिक शासन की हर कड़ी को मानते क्यों नहीं हैं? क्या वे सिर्फ मतदाताओं को अंधकार में रखने के लिए सत्तारूढ़ दल पर संविधान खत्म करने के आरोप लगा रहे हैं? घुसपैठ की समस्या हमारे देश में एक पुरानी समस्या है। यह सुखद संयोग है कि मौजूदा केंद्र सरकार ने इस समस्या पर पर्याप्त ध्यान दिया है, मगर केवल इससे बात नहीं बनेगी। असम की तरह संपूर्ण देश के लिए एनआरसी के प्रविधान करने होंगे। आखिर तमाम आधुनिक एवं विकसित देशों के पास अपने नागरिकों का लेखाजोखा है। फिर भारत जैसे देश में एनआरसी क्यों नहीं, जिसकी सीमाएं बेहद जटिल हैं। विविधता के कारण यहां अनेक जाति, धर्म, भाषा और नस्ल वाले लोग हैं, जिनकी घुसपैठियों से कई मामलों में साम्यता हो जाती है।

mukeshkr.m7542@gmail.com

मेलबाक्स

भारत की ताकत

भारत ने पिछले 10 वर्षों में हर क्षेत्र में शानदार उपलब्धि हासिल की है। मेरे विचार से सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोतों की शानदार शुरुआत और दूसरी रक्षा क्षेत्र में है। भारत दो दुश्मन देशों से घिरा है, जो आपस में घनिष्ठ मित्र हैं। ऐसे में रक्षा क्षेत्र अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसमें तो चमत्कार हुआ है। दस साल पहले भारत रक्षा सामग्री के लिए रूस, अमेरिका, फ्रांस जैसे देशों पर निर्भर था। इसमें बहुत विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ती थी, लेकिन अब इस मामले में देश आत्मनिर्भर तो हो ही रहा है, निर्यात भी करने लगा है। भारत ब्रह्मोस मिसाइल, तेजस लड़ाकू विमान व बहुत से छोटे-बड़े रक्षा उपकरण निर्यात कर रहा है। एयरक्राफ्ट, युद्धपोत बना कर लांच कर दिया। मिसाइल रुद्रम-2 का सफल परीक्षण किया गया। यह मिसाइल रूस की हाईपरसोनिक मिसाइल के टक्कर की है। पेट्रोलियम के आयात पर भी बहुत बड़ी विदेशी मुद्रा खर्च होती थी। अब इलेक्ट्रिक बसें, कारें, तिपहिया और दोपहिया बड़ी संख्या में प्रयोग हो रहे हैं। सोलर पावर का प्रयोग भी बढ़ रहा है। मोदी सरकार इसे उच्च प्राथमिकता पर ले रही है। इन कदमों से स्पष्ट है कि पेट्रोलियम का आयात धीरे-धीरे कम होगा। रक्षा क्षेत्र में और पेट्रोलियम आयात कम करने की दिशा में भारत की उपलब्धियां गदगद करने वाली हैं। इनमें और तेजी लाने की जरूरत है।

सीपी बंसल, दिल्ली

आओ मिलकर जल बचाएं

जल बचाओ स्लोगन मात्र नहीं, जीवन की आस है। जल के बिना कोई प्राणी जीवित नहीं रह सकता है। इसे हम व्यर्थ बहा कर नष्ट कर रहे हैं। घंटों सबमर्सिबल पंप चलाकर पशुओं को नहलाना, गाड़ियों की धुलाई, फर्स आदि साफ करना प्रकृति के साथ अन्याय है। मानवता सेवा करना सिखाती है, तो फिर आप दूसरों के हिस्से का जल भी नष्ट क्यों कर रहे हैं? अभी देश में कई स्थानों पर 50 डिग्री सेल्सियस के आसपास तापमान पहुंच रहा है। मनुष्य बस अपना स्वार्थ सिद्ध करने वाला है। सरकार को जल की बर्बादी करने वालों पर जुर्माने सहित सख्त कदम उठाने की आवश्यकता है। हम सबको पता है कि जल को बनाया नहीं जा सकता, उसे केवल बचाया जा सकता है। इसे बचाने के लिए हर एक भारतीय को देशभक्ति का परिचय देते हुए जल संरक्षण का संकल्प लेना चाहिए। अपने तथा अपनों के लिए आओ मिलकर जल बचाएं।

डा. आचार्य राम कुमार बघेल, पलवल

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :

दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,

डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा

ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*

दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

****

कैलाश विश्नोई
लोकनीति विश्लेषक

विश्व तंबाकू निषेध दिवस

युवा वर्ग में नशे की प्रवृत्ति पर अंकुश

तेलंगाना सरकार ने सार्वजनिक स्वास्थ्य चिंताओं का हवाला देते हुए प्रदेश में तंबाकू और निकोटिन युक्त गुटखा और पान मसाला के निर्माण, भंडारण, ढुलाई, वितरण और बिक्री पर एक साल का प्रतिबंध लगाने का निर्णय लिया है। एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत को तंबाकू के उपयोग से होने वाली बीमारियों और मौतों के कारण हर साल जीडीपी में लगभग एक प्रतिशत का नुकसान होता है। ऐसे में आज विश्व तंबाकू निषेध दिवस के अवसर पर इस बारे में व्यापक रूप से विचार किया जाना चाहिए

लोगों को नशे के दुष्प्रभावों के प्रति जागरूक करते हुए उन्हें इसकी लत लगने से बचाया जा सकता है। प्रतीकात्मक

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार दुनिया में तंबाकू से होने वाली मौतों में 70 लाख से ज्यादा मौतें प्रत्यक्ष तंबाकू के उपयोग के कारण से होता है, जबकि लगभग 12 लाख मौतें इसके धुएं के संपर्क में आने का परिणाम हैं। हर साल लगभग 41 हजार युवा और लगभग 400 बच्चों की मौत प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से तंबाकू के धुएं के संपर्क में आने के कारण हो जाती है। भारत में 20-44 आयु वर्ग (युवा-वयस्कों) के बीच तंबाकू की लत का प्रचलन चिंताजनक है। तंबाकू न केवल इसे उगाने और खाने वालों की सेहत पर बुरा असर डालता है, बल्कि यह पर्यावरण के लिहाज से भी काफी नुकसानदायक है।

प्रसिद्ध विज्ञान पत्रिका 'साइंस' में प्रकाशित अध्ययन के अनुसार, धूमपान करने से हमारा मस्तिष्क हमेशा के लिए सिकुड़ जाता है। समय रहते इसे अधिक नुकसान होने से बचाया जा सकता है, लेकिन इसे मूल स्थिति में वापस नहीं लाया जा सकता है। हाल ही में किए गए एक अध्ययन में शोधकर्ताओं ने दावा किया गया कि धूमपान न केवल दिल और फेफड़ों को प्रभावित करता है, बल्कि यह मस्तिष्क को भी सिकोड़ सकता है। तंबाकू सेवन की लत कई कारणों से लग जाती है। चिकित्सकों के मुताबिक किशोरावस्था या युवावस्था में लोग प्रायः तंबाकू का सेवन जिज्ञासा और प्रयोग के रूप में करते हैं। कोई व्यक्ति पहली बार नशा करता है, उस समय यदि कोई नशा लेने पर उसे प्रोत्साहित करे, तो वह बार-बार उसी तरह नशा लेने का प्रयास करने लगता है।

युवाओं में नशे की बढ़ती लत को लेकर चिंता और बहस दोनों बढ़ गई है। नशाखोरी युवा पीढ़ी में एक राष्ट्रीय स्वास्थ्य समस्या बन चुका है। शहरों के पब और होटल नशीले पदार्थों की आपूर्ति और सेवन के अड्डे बनते जा रहे हैं। हाल के वर्षों में किशोरों और युवाओं के बीच नशीली दवाओं के बढ़ते सेवन से जिस तरह की समस्या खड़ी हो रही है, वह एक गंभीर चिंता का विषय है। कहा जाता है कि किसी समाज और देश को अंदर से खोखला करना हो तो उसकी युवाशक्ति को नशे के गर्त में धकेलना पर्याप्त है। चूंकि जिस देश की युवा पीढ़ी नशे की गिरफ्त में आ जाए, वह अपने उज्ज्वल भविष्य के प्रति सुनिश्चित नहीं हो सकता। ऐसे में भारत में बढ़ती धूमपान एवं नशाखोरी की आदत वास्तव में चिंता का विषय होना चाहिए।

राष्ट्रीय अपराध नियंत्रण ब्यूरो के मुताबिक हमारे देश में हर दिन 21 लोग ड्रग की लत से परेशान होकर आत्महत्या कर लेते हैं। संयुक्त राष्ट्र की भी एक रिपोर्ट बताती है कि 2009 की तुलना में 2019 में भारत में ड्रग्स लेने वालों की संख्या 30 प्रतिशत बढ़ गई थी। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे (2019-21) के अनुसार, हमारे देश में 15 वर्ष से अधिक आयु के 38 प्रतिशत पुरुष तंबाकू का सेवन करते हैं। इससे भी अधिक चिंताजनक बात यह है कि तंबाकू सेवन से होनेवाली बीमारियों के कारण हमारे देश में हर साल कम से कम 13 लाख लोग मौत के मुंह में समा जाते हैं। इन आंकड़ों से जाहिर होता है कि किस तरह देश का युवा नशे की दलदल में धंसता जा रहा है और देश का सिस्टम असहाय-सा दिख रहा है। महत्वपूर्ण सवाल यह है कि युवा वर्ग नशे के गिरफ्त में क्यों आ जाते हैं? युवाओं में बढ़ती नशे की प्रवृत्ति के अनेक कारण हैं। देश-विदेश में हुए कई अध्ययन बताते हैं कि शराब और अन्य नशों का सेवन करने में 16-21 वर्ष का युवा वर्ग ज्यादा इच्छुक है और वे आसानी से खिंचे चले जाते हैं। चूंकि इस आयु वर्ग का अधिकांश समय उच्चतर विद्यालयों या महाविद्यालयों में व्यतीत होता है, इसलिए नशीले पदार्थ युवाओं को सहजता से उपलब्ध होते हैं। इसके अलावा, खराब संगत, सामाजिक रिश्तों में दूरी व अकेलेपन का अधिक होना युवा वर्ग में नशे की प्रवृत्ति को बढ़ाते हैं। बेरोजगारी भी नशे के बढ़ते प्रचलन के लिए कुछ हद तक जिम्मेदार है। सरकार को चाहिए कि वह युवाओं को रोजगार उपलब्ध कराने का प्रबंध करे तथा कानूनों का कड़ाई से पालन सुनिश्चित किया जाए। सीमापार से नशीले पदार्थों की तस्करी करने वालों के खतरनाक मंसूबे अन्य अहम वजह हैं। मादक पदार्थों के मामले में खरीद-बिक्री का तंत्र बहुत जटिल है। यह कारोबार वैश्विक स्तर पर बहुत संगठित रूप से चलाया जा रहा है। ड्रग्स तस्करी और इसके प्रसार को रोककर हम आगामी पीढ़ियों को बर्बाद होने से बचा सकते हैं।

बीमारी के रूप में देखा जाए : नशे के आदी को किसी भी व्यक्ति के चरित्र दोष के रूप में देखने के बजाय एक बीमारी के रूप में देखा जाना चाहिए जिससे व्यक्ति संघर्ष कर रहा है। समाज को समझना होगा कि नशा करने वाले पीड़ित हैं, अपराधी नहीं। युवा पीढ़ी को यदि नशीले पदार्थों के सेवन से दूर रखा जाए तो न किसी नशामुक्ति केंद्र की जरूरत होगी और न ही उनके पुनर्वास की कोई चिंता करनी होगी। याद रहे, नशाखोरी को लेकर सरकारी स्तर पर हो रही इस अनदेखी की कीमत इसलिए बहुत भारी पड़ सकती है, क्योंकि इस दलदल में अब हमारी युवा पीढ़ी फंस-धंस चुकी है। हमें समझने की जरूरत है कि बच्चों या युवाओं को नशे से बचाना बेहतर भावी पीढ़ी के निर्माण की ओर एक कदम है। इसलिए सरकार के साथ-साथ समाज की भी यह जिम्मेदारी होनी चाहिए। समय आ गया है कि युद्ध स्तर पर अभिनव प्रयासों, अधिक प्रतिबद्धता और निष्ठा से नशे की इस गंभीर सामाजिक समस्या से निजात पाया जाए।

शैक्षिक पाठ्यक्रमों में नशा मुक्ति, इसके प्रभाव और संबंधित विषय शामिल किए जाने चाहिए। जब तक बच्चों और युवाओं के मानस में यह बात नहीं बिठाई जाएगी कि नशीले पदार्थों के सेवन का उनके व्यक्तित्व और फिर समूचे समाज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, तब तक वे उससे बचने के लिए तैयार नहीं होंगे। सरकार को राज्य नीति निर्देशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 47 स्वास्थ्य के लिए हानिकारक मादक पदार्थों तथा द्रव्यों के सेवन पर प्रतिबंध लगाने हेतु कठोर कानूनों का क्रियान्वयन करने पर ध्यान देना चाहिए। साथ ही नशीले पदार्थों के दुरूपयोग के बारे में लोगों को जागरूक करने के लिए सामाजिक संस्थाओं और युवा संगठनों को भी आगे आकर इस समस्या को नियंत्रित करने में भूमिका निभानी चाहिए। समग्र प्रयास से ही हम देश को खोखला होने से बचा सकते हैं।

तंबाकू के उपयोग से बढ़ता स्वास्थ्य जोखिम

रोहित प्रियदर्शी
सामाजिक मामलों के जानकार

तंबाकू के स्वास्थ्य से जुड़े जोखिम को देखते हुए प्रतिवर्ष आज यानी 31 मई को पूरी दुनिया में विश्व तंबाकू निषेध दिवस मनाया जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के नेतृत्व में एक वैश्विक पहल के रूप में इस दिवस को मनाने का उद्देश्य जनता को तंबाकू उत्पादों के उपयोग से जुड़े स्वास्थ्य जोखिमों के बारे में शिक्षित करना है। इस बार विश्व तंबाकू निषेध दिवस की थीम 'तंबाकू उद्योग की दखल से बच्चों की रक्षा करना' रखी गई है, ताकि भविष्य की पीढ़ियों की रक्षा की जा सके और यह सुनिश्चित किया जा सके कि तंबाकू के उपयोग में गिरावट जारी रहे। वस्तुतः तंबाकू के सेवन से होने वाली मौतों की संख्या में निरंतर बढ़ोतरी को देखते हुए विश्व स्वास्थ्य संगठन ने वर्ष 1987 में तंबाकू निषेध दिवस मनाने का फैसला लिया, ताकि तंबाकू महामारी से होने वाली मृत्यु तथा बीमारियों पर वैश्विक ध्यान आकर्षित किया जा सके।

विभिन्न अध्ययनों से पता चला है कि तंबाकू के धुएं में हजारों रसायन पाए जाते हैं, जिनमें कम-से-कम 70 रसायन कैंसर का कारण बनते हैं। तंबाकू का उपयोग कई गैर-संचारी रोगों जैसे- कैंसर, हृदय रोग, मधुमेह और फेफड़ों की बीमारियों के लिए एक प्रमुख जोखिम कारक के रूप में जाना जाता है। कुछ अध्ययनों में पिछले कुछ वर्षों में वैश्विक स्तर पर बढ़े हार्ट अटैक के लिए धूमपान को भी एक संभावित कारक बताया गया है। एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत में लगभग 27 प्रतिशत कैंसर तंबाकू के उपयोग के कारण होता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की जनवरी में आई रिपोर्ट के मुताबिक विश्व में तंबाकू का सेवन करने वालों की संख्या में गिरावट आई है। इस रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2000 में जहां तीन में से एक व्यक्ति धूमपान करता था, वहीं अब पांच में से एक व्यक्ति करता है। यह गिरावट इसलिए भी बड़ी है, क्योंकि दुनिया का तंबाकू उद्योग वैश्विक स्वास्थ्य नीतियों को अपने लाभ के लिए प्रभावित करता रहा है।

तंबाकू और पान-मसाला की बिक्री को लेकर एक याचिका की सुनवाई करते हुए पिछले साल सुप्रीम कोर्ट ने साफ कहा था कि गुटखा बेचना कोई अमृत बेचना नहीं है, इस पर स्थायी तौर पर पाबंदी क्यों नहीं लगाई जाती? जाहिर है, अदालत ने एक तरह से यह बुनियादी सवाल उठाया है कि अगर सरकार यह मानती है कि गुटखा या तंबाकू उत्पादों से लोगों की सेहत को गंभीर नुकसान पहुंचता है तो इसके उत्पादन और बिक्री को लेकर कोई ठोस नियमन क्यों नहीं है। जब केंद्र सरकार ने आदेश दिया था कि एक अप्रैल 2015 से सभी तंबाकू उत्पादों के पैकेट के 85 प्रतिशत हिस्से पर खतरे की सचित्र चेतावनी छापनी होगी, तो उसका चहुंओर स्वागत हुआ था। वैसे भारत तंबाकू उद्योग के लिए बड़ा बाजार है। इस उद्योग द्वारा ऐसे कदम का विरोध किया जाना स्वाभाविक है, जिनसे तंबाकू उत्पादों के खिलाफ माहौल बनने की आशंका हो। लेकिन जनप्रतिनिधियों की जिम्मेदारी नागरिकों के हितों की रक्षा है। ऐसे में आज के दिवस के महत्व को हर व्यक्ति को समझना चाहिए और तंबाकू निर्मित उत्पादों के सेवन से सदा के लिए बचना चाहिए।

खरी-खरी

बिना समर्थन के...

पूरन सरमा

समर्थन की समस्या से मैं विगत एक दशक से परेशान हूं। कहलाने को घर का मुखिया हूं, कमाता हूं, सबको खिलाता-पिलाता हूं, लेकिन तीनों बच्चों के समर्थन से सरकार घर में पत्नी की ही चल रही है। मैं सदैव अल्पमत में ही बना रहा, एकाध बार ऐसा अवसर भी आया कि मैंने रिश्वत देकर एक दो बच्चों को तोड़ने का प्रयत्न किया, लेकिन सत्तारूढ़ सरकार के सामने नए मोर्चे को अपने पक्ष में करने में सर्वथा विफल रहा। बच्चों को कई बार समझाया कि कभी तो इस घर का मुख्यमंत्री मुझे भी बनाओ। छह-छह महीने ही सही, लेकिन एक बार तो बनाओ।

इधर बच्चों का कहना है कि ऐसी सरकार बनाने से क्या फायदा जो अल्प समय में ही गिर जाए। इससे बढ़िया तो मम्मी की सरकार भली जो उन जैसे पिछड़ों का लालन-पालन बिना किसी शर्त के करती तो रहेगी। आप तो जैसे ही सत्तारूढ़ होंगे, वैसे ही हमसे पढ़ाई-लिखाई तथा नौकरी-धंधे की अपेक्षा करेंगे। यह समस्या मम्मी की सरकार में बिल्कुल नहीं है। हमें टीवी देखने से फुरसत मिले तो कुछ करें, वरना मम्मी की सरकार के अपने मजे हैं।

वे यह भी कहने लगे हैं कि पापा सरकार चलाना आपके बूते के बाहर है। मम्मी साम, दाम, दंड, भेद चारों नीतियों के अलावा आपके वेतन से गबन-घोटाले और भ्रष्टाचार का मार्ग अख्तियार करके हम निर्दलियों को अपने पक्ष में बनाए रखती हैं। आप जेबखर्ची के नाम पर कभी फूटी कौड़ी नहीं दे पाए। हम बाजार से सामान लाते हैं, उसमें घपला करके दलाली खा जाते हैं। नकली बिल प्रोड्यूस कर देते हैं। मनचाहा साबुन तथा शैंपू लगाते हैं एवं मक्खन उड़ाते हैं, भला आप यह सब सुविधाएं मुहैया कर सकते हैं?

उनसे मेरा तर्क होता है कि यह मेरी तनख्वाह के बूते पर हो रहा है, फिर भी समर्थन तुम्हारी मम्मी को मिल रहा है या तो सरकार कृतघ्न है, तो वे हंसते हैं और कहते हैं कि पापा पहले राजनीति को जानो तथा कूटनीति को पहचानो तो समझो कि मुख्यमंत्री पद कैसे पाया जाता है। आप साफ-सुथरी सरकार बनाने का कोई सपना देख रहे हैं। समर्थन की समस्या अकेले आपकी नहीं है। सभी राज्यों के मुख्यमंत्री इससे जूझ रहे हैं।

पोस्ट

पुणे के पोर्श एक्सीडेंट मामले में आरोपित लड़का तो जेल गया ही, अपने साथ पूरे परिवार, डाक्टर और जमानत देने वाले जज को भी फंसा गया।
जितेंद्र शर्मा@capt_ivane

कुछ सेलेब्रिटी पोस्ट कर रहे हैं कि पूरी दुनिया की नजरें इस समय पश्चिम एशिया के रफाह पर लगी हैं। क्या इन लोगों की नजरें कभी कश्मीरी हिंदुओं पर भी गईं?
सुहेल सेठ@Suhelseth

दिल्ली देश की राजधानी है, लेकिन यहां पानी की किल्लत की स्थिति में पानी पर राशनिंग, प्रदूषण होने पर आड इवेन, बिजली जाने पर इसकी कटौती बेहद आम है। फिर भी जिम्मेदार दिल्ली सरकार को नहीं, पड़ोसी राज्यों को बताया जाता है?
धर्मेंद्र सिंह@dharmendra135

यूट्यूब और एक्स पर मोदी से नफरत करने वालों की फालोइंग और सक्रियता मोदी समर्थकों से कई गुना ज्यादा देखने को मिलती है। अगर मोदी तीसरी बार बहुमत हासिल करते हैं तो किसी को इसका अध्ययन करना चाहिए कि आनलाइन और आफलाइन जनमत के बीच इतना अंतर क्यों है?
रंगनाथ सिंह@rangnathsingh_

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या रेटिंग एजेंसी एसएंडपी द्वारा भारत को लेकर बेहतर आउटलुक से भारतीय अर्थव्यवस्था की साख बढ़ेगी?

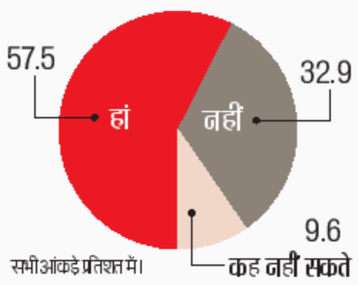

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल

क्या चुनाव मई-जून के पहले होते तो मतदान प्रतिशत अधिक रहता?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

ध्यान लगाना भी जिन्हें लगता है अपराध,
हुल्लड़ करते देश में वही लोग निर्बाध।
वही लोग निर्बाध न उसमें कोई बाधा,
क्या है भाई लोग बताओ जरा इरादा?
माना कि है पुण्य बहुत रोजा तुड़वाना,
फिर कैसे अपराध हो गया ध्यान लगाना!
- ओमप्रकाश तिवारी

झारखंड डायरी

नक्सली पीछे हटे, पनप गए नशे के कारोबारी

प्रदीप सिंह
राज्य ब्यूरो प्रमुख, झारखंड

चार दिन पहले राजधानी रांची के बीचोंबीच हुई एक घटना ने सबका ध्यान खींचा। नशे की जद में बदतमीजी पर उतारू एक युवक के साथ बार में कर्मियों ने मारपीट की। वह युवक वापस लौटा और स्वचालित हथियार से बार के एक कर्मी को नजदीक से गोली मार दी। उसने हवा में कई चक्र गोलियां भी दागी। पुलिस गश्ती दल भी उसके भय से कुछ कर नहीं पाया। युवक और उसके साथी अब पुलिस की गिरफ्त में हैं, लेकिन इस घटना ने नशे की बढ़ती प्रवृत्ति की ओर इंगित किया है। शराबखोरी के साथ-साथ नशे के अन्य साधन का सेवन और उसके बाद अपराध करने की कई कहानियां हैं। इसके लिए झारखंड एक सुरक्षित स्थान के तौर पर उभर रहा है तो इसकी वजहें भी हैं। एक हद तक इसे नार्को टेररिज्म भी कहा जा रहा है, जिसके जरिये युवा पीढ़ी को खोखला करने की कोशिश हो रही है। जटिल भौगोलिक परिस्थितियों ने नशे के पैदावार के लिए अपार मौके भी उपलब्ध कराए हैं। राज्य में नक्सलियों की मौजूदगी में अफीम की फसल का कारोबार बड़े पैमाने पर पनपा। नक्सलियों की धमक तो कम हुई, लेकिन अफीम के कारोबारियों का मनोबल नहीं गिरा। अभी भी उन इलाकों में धड़ल्ले से इसके पैदावार से लेकर खपत का विशाल तंत्र है, जहां लोगों को इसके माध्यम से होने वाले तगड़ी आय का चस्का लग चुका है। पुलिस रस्मी तौर पर हर वर्ष अफीम की फसल को नष्ट कर देती है। इसके बावजूद पकड़ी जाने वाली खेप इसकी गवाह है कि कारोबारी पीछे हटने वाले नहीं हैं।

पंजाब की ओर जाने वाले एक ट्रक को हाल ही में पुलिस ने पकड़ा तो पदाधिकारियों के होश उड़ गए। ट्रक में चावल से भरी बोरियों के बीच अफीम और डोडा छिपाए गए थे। दरअसल जिन इलाकों में अफीम की पैदावार होती है, वहां बाहर से आने वाले कारोबारी जमीन के मालिकों को सारा संसाधन उपलब्ध कराते हैं। राजधानी रांची से सटे खूंटी जिले में इनके मजबूत तंत्र को देखने पर पता चलता है कि निचले स्तर तक इन्होंने जड़ जमा लिया है। ऊंची-नीची पहाड़ियों के बीच खेतों में लंबी पाइपलाइनें बिछी हैं। इसके जरिये सिंचाई होती है। पानी की कमी वाले इस इलाके में कारोबार को संरक्षण देने वाले समूह ने एक स्थान से आपूर्ति की व्यवस्था कर रखी है। मोटर के जरिये पानी मुहैया कराया जाता है। सेटेलाइट के जरिये निगरानी में अफीम की फसल नहीं दिखे, इसके लिए खेतों में केले के पौधे लगा दिए जाते हैं। सबकुछ पूरी तरह फिक्स होता है। सैकड़ों एकड़ खेत पर अफीम की फसल लहलहाती है और माल उन राज्यों में पहुंचाया जाता है, जहां इसकी ज्यादा डिमांड है। लेकिन जहां नशे की पैदावार होगी, वहां के लोग इससे अछूते रहेंगे, यह संभव ही नहीं है।

झारखंड में अवैध रूप से होने वाली अफीम की खेती को नष्ट करते सुरक्षा बलों के जवान। फाइल

दुष्परिणामस्वरूप चावल से अपने लिए मादक पेय तैयार कर उसका उपयोग करने वाला जनजातीय समुदाय धीरे-धीरे इस जानलेवा नशे की चपेट में आ रहा है। कम समय में ज्यादा पाने की लालच के कारण यह काम तेजी से पनप रहा है। भोले-भाले लोग दबंगों के भय के कारण भी अपनी जमीन पर फसल उगाने को ये मजबूर होते हैं। ऐसा नहीं करने पर वे आफत में फंस सकते हैं। सबसे बड़ा भय खेत के बंजर होने का है। अफीम की पैदावार का यह साइड इफेक्ट है। लंबे समय तक इस फसल की पैदावार लेने से ऐसी स्थिति भी आएगी, जब खेत पूरी तरह बेकार हो जाएगा। ऐसी स्थिति विकट होगी, क्योंकि सिंचाई के साधन नहीं होने की वजह से पहले से साल में एक फसल से ज्यादा अधिकांश पहाड़ी क्षेत्रों के लोग ले नहीं पाते। कम समय में ज्यादा लाभ के चक्कर में वे इस दुष्चक्र में बुरी तरह फंसते जा रहे हैं। नक्सलियों को इस क्षेत्र से खदेड़ने के बाद इस मोर्चे पर भी काम करने की आवश्यकता महसूस हो रही है तो इसकी यह बड़ी वजह है। ग्रामसभाओं को विश्वास में लेकर यह काम किया जा सकता है, क्योंकि इनका लोगों पर व्यापक प्रभाव है।

ये वही इलाके हैं, जहां कुछ संगठनों के बहकावे में आकर लोगों ने वरीय प्रशासनिक अधिकारियों को बंधक बना लिया था। इसके लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति की भी आवश्यकता होगी। कानूनी प्रक्रिया के साथ-साथ लोगों को इस फसल उत्पादन की वजह से होने वाली परेशानियों के प्रति भी जागरूक करना होगा, तब वे वैसे तत्वों की चाल को समझ पाएंगे, जो उन्हें गलत करने के लिए प्रेरित करते हैं। नक्सलियों को इन इलाकों से खदेड़ने में वर्षों लगे हैं। ग्रामसभाओं में शासन-प्रशासन के प्रति विश्वास कायम करने की वजह से सफलता मिली है। एक बार इस मोर्चे पर भी काम हो तो आने वाली पीढ़ियों को बर्बादी की राह पर बढ़ने से बचाया जा सकेगा।

मंथन

न्यायालयों पर बढ़ता दबाव

न्यायालयों में बढ़ते मुकदमों का बोझ कम करने के लिए समय-समय पर विशेष लोक अदालतों का आयोजन किया जाता है। इसका दायरा बढ़ाया जाना समय की आवश्यकता है

अजय प्रताप तिवारी
सामाजिक मामलों के जानकार

देश में धीमी न्यायिक प्रक्रिया समाज के विकास में बाधक बन रही है। इससे कहीं न कहीं लोगों को संविधान द्वारा प्रदत्त न्याय प्राप्ति के अधिकार भी प्रभावित हो रहे हैं। न्यायिक प्रक्रिया में तेजी और लंबित मुकदमों के निस्तारण के लिए सुप्रीम कोर्ट ने इस वर्ष 29 जुलाई से तीन अगस्त तक विशेष लोक अदालत का आयोजन करने का निर्णय लिया है। इस पहल से लंबित मुकदमों के निस्तारण से लोगों में न्याय तंत्र के प्रति विश्वास बढ़ेगा और समय की बचत के साथ ही उन्हें आर्थिक लाभ भी होगा। वस्तुतः देश में बढ़ते मुकदमों से न केवल न्यायालयों पर अतिरिक्त बोझ बढ़ता है, बल्कि इससे देश के नागरिकों को न्याय मिलने में देरी भी होती है। एक निर्धारित समय सीमा में लोगों को न्याय न मिलने से कई प्रकार की समस्याओं का सामना भी करना पड़ता है।

भारत में न्यायालयों के समक्ष मुकदमे का बोझ कोई नया विषय नहीं है। देश की बढ़ती जनसंख्या, बढ़ते अपराध, अपराधों की बदलती प्रवृत्ति, जटिल कानूनी प्रक्रिया के साथ कई अन्य कारण भी हैं जिनसे मुकदमों की संख्या बढ़ रही है। न्यायालयों में न्यायाधीशों की संख्या में कमी मुख्य कारण है। न्यायालयों और न्यायाधीशों की संख्या देश की बढ़ती जनसंख्या के अनुपात के अनुरूप नहीं बढ़ पाई है। यही कारण रहा कि न्यायिक नैसर्गिक सिद्धांत के अनुसार न्यायपालिका में मांग और आपूर्ति के बीच संतुलन नहीं बैठ पाया। इस वजह से देश में मुकदमों की संख्या बढ़ती गई। देश के सभी न्यायालयों में लंबित मामलों की संख्या पांच करोड़ से भी अधिक है। सबसे अधिक मुकदमों की संख्या जिला स्तर के न्यायालयों में है। राष्ट्रीय न्यायिक डाटा ग्रिड रिपोर्ट के अनुसार, इलाहाबाद हाई कोर्ट में अप्रैल 2024 तक 10.75 लाख से अधिक मामले लंबित हैं। बांबे हाई कोर्ट में लगभग आठ लाख और राजस्थान हाई कोर्ट में करीब सात लाख मामले लंबित हैं। लगभग यही हाल देश के सभी उच्च न्यायालयों में है। जहां उच्च न्यायालयों में लगभग 62 लाख मामले लंबित हैं, वहीं उच्चतम न्यायालय में 2023 के अंत तक 80 हजार मामले लंबित थे।

भूमि विवाद : देश में मुकदमों की निगरानी करने वाली केंद्रीय एजेंसी 'नेशनल जस्टिस ग्रिड डाटा' की रिपोर्ट के अनुसार, देशभर की अदालतों में जमीन विवाद से जुड़े 57.15 लाख मामले लंबित हैं। देश में कुल दीवानी मुकदमों का 70 प्रतिशत विवाद भूमि से संबंधित है। चूंकि यह मामलों गांवों से जुड़ा है, लिहाजा भूमि से जुड़े विवाद के सर्वाधिक मुकदमे जिला स्तर के न्यायालयों में दर्ज हैं। देश की त्रिस्तरीय न्यायिक प्रक्रिया में अधीनस्थ न्यायालयों के पास सबसे अधिक लंबित मामले हैं। देश में न्याय प्रणाली की धीमी गतिविधियों और न्यायाधीशों की संख्या में कमी से मामलों की सुनवाई और निर्णय में देरी होने से नए मामलों का बोझ बढ़ता रहता है। देश के सभी स्तर के न्यायालयों में सर्वाधिक मुकदमे भूमि विवाद, संपत्ति विवाद, व्यापारिक विवाद, कर चोरी और पारिवारिक विवाद से जुड़े मामले दर्ज किए जाते हैं। इन मामलों का निस्तारण लोक अदालत के माध्यम से भी किया जा सकता है।

विकास बाधित : सामाजिक विकास के संदर्भ में एक पहलू यह भी है कि मुकदमों से देश का आर्थिक और सामाजिक विकास बाधित होता है। न्यायालयों में लंबित मुकदमों के निस्तारण हेतु वैकल्पिक विवाद निदान प्रणाली को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। लंबित मामलों का डाटा तैयार करके ई-कोर्ट एवं आनलाइन प्रणाली के माध्यम से सुनवाई की जानी चाहिए। सभी स्तर के न्यायालयों में न्यायाधीशों की संख्या बढ़ाने हेतु नियुक्ति प्रक्रिया को सरल बनाने की आवश्यकता है। देश के सभी उच्च न्यायालयों में कुल स्वीकृत न्यायाधीशों की संख्या 1114 है, जिसमें से लगभग 30 प्रतिशत पद रिक्त हैं। वर्ष 1987 में विधि आयोग ने दस लाख व्यक्तियों पर कम से कम 50 न्यायाधीशों की जरूरत को स्वीकार किया था। वर्तमान में यह अनुपात दस लाख लोगों पर 19 है। इलाहाबाद हाई कोर्ट में न्यायाधीशों के 43 प्रतिशत पद रिक्त हैं, तो वहीं गुजरात हाई कोर्ट में 44 प्रतिशत एवं पटना व राजस्थान हाई कोर्ट में इनके 36 प्रतिशत पद रिक्त हैं।

नवाचार : मुकदमों की संख्या को कम करने के लिए लंबे समय से न्याय प्रक्रिया में संभवतः कोई नवाचार नहीं किया गया है। न्याय मित्र की पहल करते हुए छोटे-मोटे विवादों को अदालत के बाहर मध्यस्थता और सुलह के माध्यम से सुलझाने का प्रयास किया जाना चाहिए। साथ ही, फर्जी मुकदमों से निपटने के लिए डिजिटल सत्यापन अनिवार्य करना होगा। बढ़ते मुकदमों की समस्या के निदान के लिए केवल न्यायालयों की जिम्मेदारी नहीं है, इसके लिए सभी नागरिकों और सरकार को एकसाथ मिलकर प्रयास करना होगा।

विवाद मध्यस्थता निवारण केंद्रों दायरा बढ़ाने से न्यायपालिका पर कम हो सकता है बोझ। प्रतीकात्मक

****

मानसून की दस्तक

मानसून के बादलों ने केरल का स्पर्श कर लिया और यह पूरे देश के लिए सुखद और स्वागतयोग्य सूचना है। गरमी से तपते उत्तर भारत में भी अब यह बहुत संतोष की बात है कि भारत-भूमि पर मानसूनी बारिश की शुरुआत हो चुकी है और इसके बादल अब निरंतर पास आते चले जाएंगे। केरल ही नहीं, पूर्वोत्तर के राज्यों में भी मानसून ने दस्तक दे दी है। वैसे केरल और दक्षिण भारत के अनेक इलाकों में मानसून के पहले की बारिश हो रही थी। पूर्वोत्तर में भी चक्रवात के प्रभाव की वजह से अनेक इलाके जल में डूबे हुए थे, फिर भी मानसून का आना और समय से दो दिन पहले आ जाना खास मायने रखता है। भू-विज्ञानियों के लिए यह अध्ययन का विषय है कि मानसून दो दिन पहले कैसे आ गया? क्या यह भारत-भूमि पर अत्यधिक गरमी या धूप का असर है? मौसम संबंधी हमारे अनुमान अगर सटीक नहीं बैठ रहे हैं, तो यह अपने आप में सोचने का विषय है। वैसे केरल तट पर मानसून के पहुंचने की तिथि 1 जून ही है, लेकिन यह कभी पहले, तो कभी कुछ देर से पहुंचता है।

खैर, मानसून को आगे बढ़कर महाराष्ट्र पार करने में दस दिन लगेंगे और जून महीने के आखिर तक यह उत्तर भारत को भी भिगोने लगेगा। वैसे यह माना जाता है कि दक्षिण में मानसून के आने का असर उत्तर भारत के मौसम पर भी पड़ता है। उत्तर भारत में लोग भीषण गरमी से मुक्ति के इंतजार में हैं। जगह-जगह से आगजनी की घटनाओं की सूचना भी आ रही है। भारत में गरमी से भी ज्यादा बड़ी समस्या जल या पेयजल का अभाव है और उससे भी बड़ी समस्या आगजनी है। इन सभी समस्याओं का अधिकतम समाधान मानसून के पास ही है और इसीलिए इसका बेसब्री से इंतजार स्वाभाविक है। मानसून अपने आप में एक पूरी संस्कृति है, जिसे दुनिया भर के अनेक विद्वान बहुत चाव से देखते हैं। अंग्रेज लेखक अलेक्जेंडर फ्रेटर ने 1980 के दशक के आखिर में एक साल मानसून का पीछा किया था, केरल के समुद्री तट से चेरापूंजी तक और एक पूरी किताब *चेजिंग द मानसून* ही लिख डाली थी कि कैसे मानसून के साथ भारत और उसका समाज खूबसूरत करवट लेता है। आज भी भारतीय समाज राहत की करवट के लिए बेताब है। मानसून के समय जीवन शैली के साथ-साथ पहनावे और खान-पान में भी बहुत परिवर्तन आ जाता है। सांस्कृतिक रूप से देश और समृद्ध हो उठता है। हालांकि, मानसून का समय भारतीयों के लिए सावधानी का समय है। बाढ़ और जल भराव से भी बड़े पैमाने पर नुकसान होता है।

केरल व दक्षिण भारत के अनेक इलाकों में मानसून के पहले की बारिश हो रही थी और अब मानसून का आना व समय से दो दिन पहले आना खास मायने रखता है।

बहरहाल, यह भी एक खुशखबरी है कि भारतीय मौसम विज्ञान विभाग ने इस साल सामान्य से अधिक बारिश की भविष्यवाणी की है। देश भर में दक्षिण-पश्चिम मानसून वर्षा चार प्रतिशत की मॉडल त्रुटि के साथ लंबी अवधि के औसत का 106 प्रतिशत होने की संभावना है। अच्छी बारिश का व्यापक महत्व है, क्योंकि भारतीय कृषि तंत्र भी बहुत हद तक बारिश पर निर्भर है। पूरी ग्रामीण अर्थव्यवस्था का सीधे बारिश से जुड़ाव है और ग्रामों में अगर बारिश की वजह से खुशहाली आती है, तो इससे शहरों को भी लाभ तय है। एक और बात गौर करने की है कि इस बार पहाड़ों और जंगलों में बहुत आग लगी है। उत्तराखंड से लेकर जम्मू-कश्मीर तक से आग की शिकायत आई है। वैज्ञानिक भी यह मानते हैं कि गरमी के दिनों में जंगलों में लगने वाली आग का असली उपचार बारिश ही है।

मुस्लिम साझेदारी सुधारने का सवाल

यहां स्कैन करें

हिलाल अहमद | एसोसिएट प्रोफेसर, सीएसडीएस

हमारे देश का लोकतांत्रिक इतिहास यह दिखाता है कि कैसे गैर-मुस्लिम नेता भी मुस्लिमों की समस्याओं के लिए खड़े रहे हैं। इस स्वस्थ परंपरा को और मजबूत करना चाहिए।

अठारहवें लोकसभा चुनाव में मुस्लिम उम्मीदवारों की संख्या में गौरतलब गिरावट भारतीय चुनावी राजनीति की दो दिलचस्प दिशाओं को रेखांकित करती है। अव्वल तो यही लगता है कि सियासी दल वास्तव में पेशेवर हो गए हैं। उन्होंने जीतने की क्षमता को ही प्रत्याशी चयन का पैमाना बना लिया है। दलों की टिकट वितरण व्यवस्था अब किसी वैचारिक प्रतिबद्धता से निर्देशित नहीं होती है। इसके बजाय, जाति, धर्म को ज्यादा महत्व दिया जाता है। सिर्फ राजनीतिक साख के लिए किसी मुस्लिम को टिकट देना अब व्यावहारिक रूप से कठिन हो गया है।

दूसरी, राजनीति के प्रमुख आख्यान के रूप में हिंदुत्व-संचालित राष्ट्रवाद के उद्भव ने गैर-भाजपा दलों पर भी असर डाला है। ये दल खासकर राजनीतिक सदंर्भों में महज मुस्लिम पहचान या छवि से बचने लगे हैं। भाजपा अपने अब तक के प्रयासों से यह धारणा बनाने में सफल रही है कि अतीत में विपक्षी दलों ने मुसलमानों का तुष्टीकरण किया है और इससे हिंदू हित कमजोर हुआ है। कोई भी पार्टी नहीं चाहेगी कि वह सिर्फ मुस्लिम समर्थक के रूप में पहचानी जाए। वैसे, आज के भारत में मुसलमानों के सियासी हाशिये पर होने का जवाब तलाशते हुए उनकी समाजशास्त्रीय विविधता के साथ-साथ कानूनी-सांविधानिक ढांचे पर भी हमें ध्यान देना चाहिए।

एक समय था, जब जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में उत्तर-औपनिवेशिक सरकार इस मोर्चे पर स्पष्ट थी। वह मुसलमानों को सांविधानिक अल्पसंख्यक के रूप में मान्यता देने और उनकी रक्षा करते हुए सांप्रदायिक राजनीति से छुटकारा पाने की इच्छुक थी। सांप्रदायिक राजनीति की वजह से ही देश विभाजित हुआ था। इस परस्पर विरोधी लगने वाले मुद्दे से निपटने के लिए एक अलिखित मानदंड बनाया गया था। नागरिकों के एक समूह को 'मतदाता' के रूप में देखते हुए प्रतिनिधित्व की धर्मनिरपेक्ष अवधारणा बनाई गई थी।

वैसे, जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 साफ कहता है कि धर्म को चुनावी प्रक्रियाओं से अलग रखना चाहिए। असंख्य मतदाताओं की धर्मनिरपेक्ष सोच ने कम से कम सैद्धांतिक रूप से एक संभावना पैदा की कि मुस्लिम मतदाता सिर्फ मुस्लिम उम्मीदवारों को वोट नहीं करेंगे। दूसरे शब्दों में कहें, तो नेहरूवादी सरकार ने निर्वाचित निकायों में पृथक मुस्लिम प्रतिनिधित्व को दृढ़ता से हतोत्साहित किया था। हालांकि, इसका मतलब यह नहीं कि सामूहिक मुस्लिम हितों की अनदेखी की गई। धर्मनिरपेक्ष भारत में मुस्लिम भागीदारी के लिए दो महत्वपूर्ण तंत्र अपनाए गए। सबसे पहले, राज्यसभा और राज्य विधान परिषदों से मुस्लिम नेताओं को लाने का तरीका आजमाया गया। बाद में भारतीय जनसंघ और भाजपा भी अपने मुस्लिम नेताओं को राज्यसभा के रास्ते ही आगे लेकर आई। दूसरा, धर्मनिरपेक्ष भारतीय संस्कृति के एक अभिन्न पहलू के रूप में मुस्लिम उपस्थिति की सराहना की गई। संविधान में अल्पसंख्यक को दिए गए अधिकारों के प्रावधान के साथ यह अच्छा हुआ। सरकारों ने भी देश के धर्मनिरपेक्ष लोकाचार को दर्शाने के लिए मुस्लिम तहजीब और विरासत को सामने पेश किया।

निर्वाचित निकायों में अलग मुस्लिम प्रतिनिधित्व से इनकार और सार्वजनिक जीवन में सकारात्मक मुस्लिम उपस्थिति के बीच का समीकरण बहुत नाजुक था। सियासी दल चुनावी गणना से निर्देशित होते थे। ऐसे में, जरूरी था कि वे चुनावी मुद्दे के रूप में मुस्लिम हितों को सामने लाएं। नेहरू के निधन के ठीक बाद यही हुआ। इंदिरा गांधी ने धर्म की एक नई राजनीति शुरू की, जिसने मुस्लिम प्रतिनिधित्व और मुस्लिम भागीदारी के बीच संतुलन की पूरी तरह उपेक्षा की।

वास्तव में, 2006 में सच्चर आयोग की रिपोर्ट के प्रकाशन के बाद मुस्लिम प्रतिनिधित्व पर बहस को नवजीवन मिला। मुस्लिमों की उपेक्षा और पिछड़ापन नीतिगत मुद्दों के रूप में उभरे, जबकि सामाजिक समावेशन का खाका चुनावी राजनीति का मार्गदर्शक सिद्धांत था। मुस्लिम भागीदारी और मुस्लिम प्रतिनिधित्व के मिश्रण ने यह धारणा बनाई कि सांविधानिक धर्मनिरपेक्षता एक अलग मुस्लिम सियासी पहचान की रक्षा से संबंधित है। इस अस्पष्ट स्थिति ने हिंदुत्व की राजनीति की इस दलील को मजबूत किया कि मुस्लिम पिछड़ेपन व भागीदारी पर कोई चर्चा अलगाववाद को ही जन्म देगी। 2024 में भाजपा का चुनावी अभियान स्पष्ट रूप से इसी तर्क की अभिव्यक्ति है।

अब सवाल उठता है : हमें मुस्लिम राजनीतिक प्रतिनिधित्व के बारे में कैसे बात करनी चाहिए, खासकर अब जब मुस्लिम पहचान गैर-भाजपा दलों के लिए भी राजनीतिक समस्या बन गई है? मैं इससे निपटने के लिए एक प्रस्ताव करता हूं। सबसे पहले, प्रतिनिधित्व के विचार को ही लोकतांत्रिक बनाने की जरूरत है। मुस्लिम प्रतिनिधित्व पर किसी भी चर्चा में मुस्लिम दलितों, मुस्लिम महिलाओं और गरीब मुसलमानों की चिंताओं को स्वीकार किया जाना चाहिए। इसमें पसमांदा राजनीति का योगदान बहुत खास है।

दूसरा, व्यापक संस्थागत व्यवस्था का लोकतंत्रीकरण। हमें मुस्लिम प्रतिनिधित्व का मूल्यांकन करने के लिए सिर्फ संसद और विधानसभाओं को ही नहीं देखना चाहिए। इसके बजाय हमें राजनीतिक दलों के समावेशी चरित्र और उनकी आंतरिक संरचना का आकलन करना चाहिए। क्या दलों के पास हाशिये पर पड़े समूहों को अपने संगठन में शामिल करने की तय व्यवस्था है? वे चुनाव लड़ने के लिए उम्मीदवार कैसे तय करते हैं? क्या दलों में नियमित रूप से संगठन के चुनाव होते हैं? ये सवाल अहम हैं, क्योंकि सियासी दल अत्यधिक केंद्रीकृत हो गए हैं। उनकी लोकतांत्रिक व धर्मनिरपेक्ष साख पर कोई चर्चा नहीं होती है।

अंततः हमें लोकतांत्रिक धर्मनिरपेक्षता के सांविधानिक सिद्धांत की पालना करनी चाहिए। भारत का संविधान एक ऐसी राजनीतिक संस्कृति की परिकल्पना करता है, जहां किसी समूह का दर्द, पीड़ा और हाशिये पर होना पूरे समाज के लिए गंभीर चिंता का विषय बनना चाहिए। अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक प्रश्न पर महात्मा गांधी बिल्कुल यही तर्क देते थे। हमारा इतिहास दिखाता है कि कैसे गैर-मुस्लिम नेता हाल तक मुस्लिम चिंताओं के लिए खड़े रहे हैं। इस स्वस्थ परंपरा को और मजबूत करना चाहिए। आम मुसलमान यह जरूरी नहीं मानते कि उनका प्रतिनिधित्व सिर्फ मुस्लिम सांसद और विधायक ही करें। हालांकि, वे चाहेंगे कि उनकी बात सुनी जाए और सम्मानित नागरिक के रूप में उन्हें पहचाना जाए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

अमेरिकी चुनावी दंगल : ट्रंप-बाइडन में फिर दो-दो हाथ

यहां स्कैन करें

फ्रैंक एफ इस्लाम | अमेरिकी उद्यमी व समाजसेवी

अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव में जो बाइडन और डोनाल्ड ट्रंप के आमने-सामने आने के साथ ही यह मुकाबला साल 2020 सरीखा हो गया है। बाइडन बनाम ट्रंप की यह चुनावी जंग करीब-करीब तभी तय मानी जा रही थी, जब नवंबर 2022 में ट्रंप ने राष्ट्रपति चुनाव लड़ने की अपनी मंशा जाहिर की और अप्रैल, 2023 में बाइडन ने फिर से मैदान में उतरने का एलान किया। डेमोक्रेटिक पार्टी की तरफ से बाइडन ने यह रास्ता कमोबेश निर्विरोध पूरा किया, जबकि रिपब्लिकन खेमे में प्राइमरी में काफी रस्साकशी हुई, लेकिन शुरू से यह भी साफ था कि रेस ट्रंप ही जीतने वाले हैं, बशर्ते कि वह कोई बड़ी गलती न कर बैठें। रिपब्लिकन के अन्य दावेदार मजबूती से सामने आने के बजाय नेपथ्य से कोशिश करते दिखे। अब जब चुनाव नजदीक आ रहे हैं, तो छह राज्यों- पेंसिल्वेनिया, मिशिगन, विस्कॉन्सिन, एरिजोना, नेवादा और जॉर्जिया पर सबकी नजरें टिक गई हैं, क्योंकि साल 2020 के विजेता का फैसला इन्हीं राज्यों ने किया था और इस वर्ष भी इन्हीं के निर्णायक बनने की उम्मीदें हैं।

बाइडन 81 के हो चले हैं, जबकि ट्रंप कुछ हफ्तों में 78 के हो जाएंगे। लिहाजा, जो भी जीतेगा, अमेरिकी इतिहास में सबसे उम्रदराज राष्ट्रपति साबित होगा।

हालिया जनमत सर्वेक्षणों से पता चलता है कि इन छह में से पांच राज्यों में ट्रंप आगे चल रहे हैं, पर ये शुरुआती सर्वे हैं। ये सर्वेक्षण इसकी भी मुनादी करते हैं कि अपने समर्थक वर्गों से इतर न तो ट्रंप और न ही बाइडन खासे लोकप्रिय हैं, जिसकी वजह कुछ हद तक उनकी उम्र भी है। बाइडन 81 साल के हो चले हैं, जबकि ट्रंप अगले कुछ हफ्तों में 78 वर्ष के हो जाएंगे। लिहाजा, इन दोनों में से जो भी जीतेगा, वह अमेरिकी इतिहास में सबसे उम्रदराज राष्ट्रपति साबित होगा। सर्वेक्षणों से यह भी संकेत मिलता है कि अधिकांश मतदाताओं के लिए महत्वपूर्ण मुद्दा अर्थव्यवस्था है और बाइडन को इस मोर्चे पर कड़ी चुनौती मिल रही है। दरअसल, अपूर्व आर्थिक विकास और रिकॉर्ड रोजगार सृजन के बावजूद महंगाई का लगातार बने रहना उनकी सरकार के लिए बड़ी चुनौती साबित हुई है।

उधर, कई मतदाताओं के लिए चिंता का सबब अमेरिकी लोकतंत्र का भविष्य भी है। ऐसे लोगों का मानना है कि अगर ट्रंप चुने गए, तो वे शासन के लिए निरंकुश नजरिया अपनाएंगे। इस समय बाइडन के लिए सर्वेक्षणों से सबसे अधिक परेशान करने वाला यह खुलासा है कि उनकी सरकार ने रंगभेद से जूझने वाली आबादी, यानी 18 से 35 आयु वर्ग के युवा वोटरों और स्वतंत्र मतदाताओं के हित में बहुत ज्यादा काम नहीं किया। साल 2020 में बाइडन की जीत में ये मतदाता-वर्ग काफी अहम सिद्ध हुए थे। बाइडन के खिलाफ एक और मुद्दा इजरायल-गाजा संघर्ष में उनकी नीति है। करीब 40 फीसदी पंजीकृत डेमोक्रेटिक वोटर इस मुद्दे पर सरकार के फैसले का समर्थन नहीं कर रहे।

ट्रंप की मुख्य चुनौतियों में सबसे पहली तो यही है कि 15 से 20 फीसदी रिपब्लिकन मतदाता उनके पक्ष में नहीं दिख रहे। उनकी परेशानी की एक वजह रॉबर्ट एफ केनेडी (जूनियर केनेडी) की संभावित तीसरे पक्ष की उम्मीदवारी भी है। राष्ट्रपति पद के लिए स्वतंत्र उम्मीदवार के रूप में अपने नाम का एलान करने के बाद से केनेडी को अच्छा वोट मिल रहा है। हालांकि, चार आपराधिक मामले भी ट्रंप की राह में मुश्किलें पैदा कर रहे हैं।

जाहिर है, आने वाले हफ्तों में बाइडन और ट्रंप, दोनों अपने मुख्य समर्थक वर्गों को संगठित करने के साथ ही स्वतंत्र मतदाताओं को भी लुभाने का प्रयास करेंगे, जो अक्सर करीबी मुकाबले वाले राज्यों में नतीजा तय करते हैं। इसके लिए बाइडन ने ट्रंप के राष्ट्रपति बनने की सूरत में अमेरिकी लोकतंत्र पर आने वाले खतरे के बारे में विज्ञापन भी चलाना शुरू कर दिया है। आने वाले दिनों में वह गर्भपात जैसे मसलों पर भी मुखर हो सकते हैं, जो कई अमेरिकियों के लिए मायने रखता है। यह भी सुबूत पेश किया जा सकता है कि रिपब्लिकन उनकी तुलना में नेतन्याहू से ज्यादा करीब हैं। ट्रंप अमेरिका को फिर से महान बनाने, 2020 की चुनावी जीत, अपने आपराधिक मामलों को सियासी साजिश बताने, अवैध अप्रवासी मुद्दे को उठा सकते हैं। स्पष्ट है, 2020 के राष्ट्रपति चुनाव की तरह इस बार भी एक करीबी मुकाबले का हम गवाह बनने जा रहे हैं और इसके केंद्र में रहेंगे लोकतंत्र, अर्थव्यवस्था और आव्रजन जैसे मुद्दे।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

मनुष्य होने का महत्व

हमारा पूरा जीवन घर की खोज है। एक ऐसे स्थान की खोज, जहां तुम विश्राम ले सको। यह एक ऐसे अंतराल की खोज है, जहां तुम अपने होने में और अपने अस्तित्व में पूर्ण संतुष्टि पा सको। जब मैं कहता हूं कि मनुष्य को स्वयं अपना निर्माण करना है, तो मेरे कहने का अर्थ है कि वह कैसे परमात्मा के साथ सम्मिलित होकर उसका अंश ग्रहण करे। जानवर जीवित हैं, लेकिन वे कोई निर्माण नहीं करते। वृक्ष जीवित हैं, लेकिन वे कोई निर्माण नहीं करते। यदि कुछ चीजें उनके द्वारा आती भी हैं, तो वे प्राकृतिक और स्वाभाविक उपज हैं। उनसे फूल आएंगे, फल आएंगे। केवल मनुष्य है, जो नव-निर्माण करता है। एक आम का वृक्ष आमों को पैदा करेगा, पर मनुष्य के बारे में कुछ भी निश्चित नहीं है। कोई बुद्ध बनेगा अथवा कोई नर्तक, कोई नहीं जानता।

मनुष्य एक अव्यवस्था है, एक सृजनात्मक उलझन है। वह अपने अस्तित्व में बहुत धुंधला है, जैसे कोहरे की चादर में घिरा है वह। तुम उसे सीमा में आबद्ध नहीं कर सकते, तुम ठीक-ठीक बता नहीं सकते कि वह है क्या! मनुष्य प्रतिदिन बदलता रहता है। वह ठीक एक नदी की भांति है। यही मनुष्य की गरिमा और महिमा है। वह अकेला ऐसा प्राणी है, जो सृजन कर सकता है, वह अकेला ऐसा प्राणी है, जो परमात्मा की सृजनात्मकता में उसका भागीदार बन सकता है।

मगर मनुष्य निरंतर भय से घिरा रहता है- असफल होने का भय, कुछ न बनने का भय, अस्तित्वहीन बनकर रहने, अपरिपूर्ण कामनामय अभावों का भय और बंजर, उजाड़ मरूस्थल बने रहने का भय। असफलता की आशंका निन्यानबे प्रतिशत है। सफलता की संभावना केवल एक प्रतिशत, इसलिए इसके बारे में मनुष्य का हृदय कांपता रहता है। मनुष्य को अपना प्रत्येक कदम अज्ञात में, बिना किसी गारंटी और बिना किसी सुरक्षा के उठाना होता है। प्रत्येक रास्ता तुम्हें अज्ञात में ले जा रहा है। तुम नहीं जानते कि वह तुम्हें लक्ष्य तक ले जाएगा अथवा आगे से बंद एक तंग गली की ओर मोड़ देगा। हो सकता है कि तुम्हें वापस लौटना पड़े, तुम्हारे सारे प्रयास व्यर्थ हो जाएं। कोई भी नहीं जानता।

मनुष्य प्रतिदिन बदलता रहता है। वह नदी की भांति है। यही उसकी गरिमा और महिमा है। वह अकेला प्राणी है, जो सृजन कर सकता है, सृजनात्मकता में परमात्मा का भागीदार बन सकता है।

प्रत्येक को बिना यह जाने कि वह कहां जा रहा है, अंधकार में प्रवेश करना ही होता है, चलना ही पड़ता है, क्योंकि यदि तुम आगे नहीं बढ़े, तब भी जीवन हाथों से फिसला जा रहा है। इसलिए अच्छा यही है कि न चलने के बजाय चलते रहो, क्योंकि चलते रहने के साथ वहां कम से कम इस बात की संभावना तो रहती है कि तुम पहुंच सकते हो। न चलने से इस बारे में ऐसी कोई संभावना होती ही नहीं। इसलिए गलतियां करने से बहुत डरे हुए लोग ऐसे लोग हैं, जो विकसित होने या कुछ बनने के महान अवसर को खो देते हैं।

ओशो

शेखर कपूर | फिल्म निर्देशक

एआई द्वारा नौकरी छीनने के शोर में यह याद कर लेना बेहतर होगा कि दुनिया में सिर्फ 30 फीसदी आबादी के पास नौकरियां हैं, मगर इंटरनेट तक 65 प्रतिशत लोगों की पहुंच है। एआई वास्तव में बहुत सारे लोगों को उत्पादक बनने में समर्थ बनाएगा।

हिन्दुस्तान | 75 साल पहले 31 मई, 1949

भारतीय कम्यूनिस्ट

अभी हाल में दक्षिण-पूर्वी एशिया के ब्रिटिश कमिश्नर जनरल मैलकम मैकडोनल्ड ने लन्दन में एक पत्र-प्रतिनिधि सम्मेलन में कहा कि एशिया में भारत ही ऐसा देश है, जहां कम्यूनिस्टों को सबसे बड़ी विफलता का मुंह देखना पड़ा है। बर्मा, मलाया, हिन्दचीन आदि एशियाई देशों में कम्यूनिस्टों की विभिन्न हलचलों का सिंहावलोकन करते हुए उन्होंने कहा : ''भारत ने कई प्रकार से अपने को एशियाई जनता का नेता बना लिया है और कम्यूनिस्टों ने वहां उपद्रव तथा अशान्ति कराने के लिए भरपूर कोशिश की, किन्तु वे भारत की प्रजातंत्री तथा राष्ट्रीय सरकार की सुदृढ़ स्थिति को न डिगा सके।''

श्री मैकडोनल्ड का कथन बिलकुल सत्य है। यद्यपि उन्होंने उन कारणों पर प्रकाश नहीं डाला जिनके कारण भारत में कम्यूनिस्टों को मुंह की खानी पड़ी है, किन्तु भारत सरकार के आगे ''प्रजातंत्री तथा राष्ट्रीय'' विशेषण लगाकर उन्होंने अनजाने में इन कारणों की ओर इंगित कर दिया है। यदि किसी देश की सरकार वास्तविक रूप में प्रजातंत्री तथा राष्ट्रीय हो, तो वहां कम्यूनिस्टों तथा दूसरे अराजक तत्वों की सफलता के लिए बहुत कम गुंजाइश रह जाती है। आज कोई भी यह अभियोग लगाने की हिम्मत नहीं कर सकता कि भारत की वर्तमान सरकार करोड़ों किसानों, मजदूरों तथा अन्य लोगों की प्रतिनिधि-सरकार नहीं है। समाजवादी सरकार के कड़े आलोचक हैं, किन्तु वे भी खुलेआम यह चुनौती नहीं दे सके हैं कि पं. जवाहरलाल नेहरू तथा उनके साथी मन्त्री भारतीय जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करते। नेहरूजी तथा सरदार पटेल का स्थान और कौन ले सकता है? स्वतंत्र भारत के मन्त्रिमण्डल को अपना आशीर्वाद देते हुए महात्मा गांधी ने कहा था कि उसमें जनता के सबसे बड़े, सच्चे सेवक तथा योग्यतम व्यक्ति हैं।

जिन लोगों ने अपना तन-मन-धन देश के लिए उत्सर्ग कर दिया और जो अहर्निश भारत की उन्नति की चिन्ता करते रहते हैं, उनके ही हाथों में देश की बागडोर है। नेहरूजी तथा सरदार पटेल के विषय में कहा जा सकता है कि वे करोड़ों के हृदयों के स्पन्दन को सुन सकते हैं तथा करोड़ों मस्तिष्कों के विचार-प्रकम्पन को अनुभव कर सकते हैं। अतएव ऐसे तपे-तपाये, सहृदय, योग्य नेता यदि कभी गलती भी करें तो उसे जल्दी से सुधार सकते हैं।

ईवीएम में गड़बड़ी की गुंजाइश नहीं

विभिन्न स्रोतों से 'इंडिया' ब्लॉक और इसके प्रमुख दल कांग्रेस को यह आभास हो चुका है कि मोदी सरकार तीसरी बार लगातार सत्ता पर काबिज होने जा रही है। स्वाभाविक है कि हार का ठीकरा किसके ऊपर फोड़ा जाए, इसको लेकर विपक्षी दलों में कवायद शुरू हो गई है। इसी कारण ईवीएम पर बार-बार अनावश्यक संदेह जताया जा रहा है। गौरतलब है कि पहले भी ईवीएम से छेड़छाड़ की आशंका को लेकर अदालतों में मामला उठाया जा चुका है, जिनमें ईवीएम के उपयोग में निहित तकनीकी सुदृढ़ता और प्रशासनिक उपायों के समस्त पहलुओं पर गौर करने के बाद पाया गया था कि यह विश्वसनीय, भरोसेमंद और छेड़छाड़ से मुक्त है। माना यह भी गया था कि मतपत्र/मतपेटी वाली पुरानी चुनाव-प्रणाली की तुलना में ईवीएम के कई लाभ हैं। इसमें कोई वायरस या बग डालने का सवाल भी नहीं पैदा होता, क्योंकि इसकी तुलना किसी लैपटॉप या कंप्यूटर से नहीं की जा सकती है। दरअसल, कंप्यूटर में इंटरनेट के जरिये कनेक्शन होता है और उसके खास डिजाइन को देखते हुए प्रोग्राम विशेष से छेड़छाड़ की जा सकती है, लेकिन ईवीएम स्वतंत्र इकाइयां हैं और इनमें प्रोग्राम पूरी तरह से एक भिन्न प्रणाली के रूप में होता है। फिर भी, राजनीतिक दल यह कहते हुए इस मुद्दे को हवा देते रहते हैं कि ईवीएम छेड़छाड़ से पूरी तरह से मुक्त नहीं हैं, हालांकि, यह अब तक अदालत में साबित नहीं हो सका है। यही नहीं, चुनाव आयोग द्वारा छेड़छाड़ करने की दी गई चुनौती को भी किसी व्यक्ति ने स्वीकार नहीं किया। साफ है, ईवीएम में गड़बड़ी की कोई गुंजाइश नहीं है। सारी आशंकाएं निराधार हैं। सिर्फ भ्रम पैदा करने के लिए कुछ लोग आरोप लगाते रहते हैं।

युगल किशोर राही, टिप्पणीकार

लोकतंत्र पर हमला

चुनाव आयोग को बार-बार ईवीएम की सुरक्षा और पारदर्शिता पर जिस तरह से सफाई देनी पड़ रही है, उससे हमारी लोकतांत्रिक प्रक्रिया कमजोर हो रही है। कुछ विपक्षी नेता ईवीएम पर प्रश्न उठा रहे हैं, जबकि चुनाव आयोग ही नहीं, उच्चतम न्यायालय भी इसकी सुरक्षा पर अपनी मुहर लगा चुके हैं। अगर हम ईवीएम की विश्वसनीयता को लेकर बार-बार संदेह जताते रहेंगे, तो यह हमारे लोकतंत्र की नींव को कमजोर कर देगा। चुनाव आयोग का कार्य आसान नहीं है; वह देश भर में निष्पक्ष चुनाव कराने के लिए दिन-रात मेहनत करता है। ऐसे में, विपक्षी दलों को चाहिए कि वे अपनी ऊर्जा चुनाव-तैयारियों और जनहित के मुद्दों पर केंद्रित करें।

अवनीश कुमार गुप्ता, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम

वोटिंग मशीन

किसी भी मशीन से छेड़छाड़ मुमकिन

जर्मनी की अदालत में जब आम चुनाव में ईवीएम के इस्तेमाल संबंधी मामले की सुनवाई हुई थी, तब उसने एक महत्वपूर्ण निर्णय दिया कि 'वोटर और रिजल्ट के बीच टेक्नोलॉजी, यानी तकनीक पर निर्भरता असांविधानिक है'। जर्मनी एक समय में तकनीक के मामले में अग्रणी देश रहा है, इसलिए अगर वह ऐसा कह सकता है, तो इसका मतलब यही है कि वह जानता है, वोट दर्ज करने और वोटों की गिनती होने के बीच तकनीक के इस्तेमाल से चुनाव नतीजों को बदला जा सकता है। असल में, मशीनों के बारे में हमें एक सार्वभौमिक सत्य जान लेना चाहिए कि 'एवरी मशीन इज हैकेबल', यानी हर मशीन 'हैक' की जा सकती है, उसकी सुरक्षा में सेंध लगाई जा सकती है। लिहाजा, सवाल यह है कि क्या ईवीएम से भी छेड़छाड़ संभव है। इसका सीधा जवाब है, हां!

वर्ष 2013 के मध्य प्रदेश विधानसभा चुनाव में सुरखी विधानसभा क्षेत्र में ऐसा ही कुछ सामने आया था। हारने वाले प्रत्याशी के इलेक्शन एजेंट बघेल ने बताया कि एक व्यक्ति ने चुनाव प्रचार के दौरान मुझसे संपर्क किया, उसने दावा किया था कि वह रिमोट सेंसर तकनीक के जरिये ईवीएम में किसी भी प्रत्याशी के पक्ष में मतदान को प्रभावित कर सकता है। वह अपने साथ एक रेडियोनुमा उपकरण लिए था। इसमें उसने ईवीएम की फ्रीक्वेंसी सेट करते हुए वोट यहां-वहां करने का दावा किया था। हमने उसे भगा दिया था, लेकिन बाद में राहतगढ़ के पोलिंग बूथ पर उस व्यक्ति द्वारा दिखाई गई डिवाइस जब एक ईवीएम के नीचे लगी मिली, तो मुझे संदेह हुआ कि उसने किसी प्रत्याशी विशेष के कहने पर उसे यहां इंस्टॉल किया होगा।

बघेल के अनुसार, इस डिवाइस ने हमारे प्रत्याशी के चुनाव को बहुत हद तक प्रभावित किया। इसका सबसे बड़ा उदाहरण यह है कि वर्ष 2003 के चुनाव में इस बूथ पर 903 में से 864 कांग्रेस को और 24 भाजपा को मिले थे। वर्ष 2008 के चुनाव में 736 वोट में से 566 कांग्रेस को और 103 वोट भाजपा को मिले थे। मगर डिवाइस वाली घटना सामने आने के बाद इस बूथ से वर्ष 2013 के चुनाव में 653 वोट में से भाजपा को 341 व कांग्रेस को 278 वोट मिले। वोट में आए इस अंतर के आधार पर ही देश के तत्कालीन मुख्य निर्वाचन आयुक्त से शिकायत की गई थी। मगर सारे सुबूत सामने होते भी इस मामले में कुछ नहीं किया गया। बाद में यही बताया गया कि डिवाइस की जांच से कुछ नहीं निकला। ईवीएम हैक करने के आरोप बेबुनियाद करार दे दिए गए।

गिरीश मालवीय, टिप्पणीकार

अमर उजाला

नई दिल्ली ■ शुक्रवार, 31 मई 2024

प्रवाह

महोत्सव विश्वास का | 75 | निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक | स्थापना वर्ष : 1948

अतीत पर ध्यान न दें, भविष्य के बारे में न सोचें और अपने मन को वर्तमान क्षण पर केंद्रित करें। -भगवान गौतम बुद्ध

प्रतिष्ठित क्रेडिट रेटिंग एजेंसी एस ऐंड पी ने अगर भारत की साख को लेकर सकारात्मकता के साथ अपना नजरिया बदला है, तो यह देश की अर्थव्यवस्था की मजबूती के प्रति आश्वस्त तो करता ही है, इससे विदेशी कंपनियों व निवेशकों का भारत पर भरोसा और भी बढ़ेगा।

भारत पर भरोसा

क्रेडिट रेटिंग एजेंसी एस ऐंड पी ने अगर दस साल बाद भारत को लेकर अपना नजरिया बदलते हुए उसके सॉवरेन रेटिंग परिदृश्य को 'स्थिर' से बढ़ाकर 'सकारात्मक' कर दिया है, तो यह देश की अर्थव्यवस्था के लिए अच्छी खबर है। यह घोषणा तब की गई है, जब लोकसभा चुनाव के नतीजे अगले कुछ दिनों में आने वाले हैं। लिहाजा अगर अमेरिकी क्रेडिट एजेंसी को यह लगता है कि चुनाव के नतीजे कुछ भी हों, यहां आर्थिक सुधार और राजकोषीय नीतियां जारी रहेंगी, तो यह देश की अर्थव्यवस्था की मजबूती के प्रति आश्वस्त ही करता है। दरअसल, किसी देश की सॉवरेन रेटिंग कर्ज चुकाने की उसकी क्षमता से निर्धारित होती है। कोई देश अगर अपने सारे कर्जे चुकाने की स्थिति में है, तो उसे सर्वोच्च रेटिंग दी जाती है। जैसे-जैसे यह क्षमता कम होती जाती है, रेटिंग भी घटती जाती है। केंद्रीय बैंक द्वारा केंद्र सरकार को करीब दो लाख करोड़ रुपये का रिकॉर्ड लाभांश देने के एक हफ्ते के भीतर ही एस ऐंड पी की यह घोषणा हुई है, तो इसकी वजह समझी जा सकती है। दरअसल, राजकोष की कमजोर स्थिति हमेशा से भारत की सॉवरेन रेटिंग का सबसे कमजोर पहलू रहा है। मगर अब सरकार की ओर से राजकोषीय स्थिति को मजबूत करने के जो ठोस प्रयास हो रहे हैं, उससे अर्थव्यवस्था पटरी पर आती दिख रही है। हालांकि देश की अर्थव्यवस्था के प्रबंधन की तारीफ करने के बावजूद अगर एस ऐंड पी ने भारत की दीर्घकालीन सॉवरेन रेटिंग 'बीबीबी –' और अल्पकालीन सॉवरेन रेटिंग ए-3 ही बनाए रखी है, जो निम्नतम निवेश श्रेणी है, तो यह हैरान करता है। हालांकि, कोरोना से उबरने के बाद वैश्विक अनिश्चितताओं के दौर में अब पूरी दुनिया बेशक मंदी जैसी स्थितियों से गुजर रही है, लेकिन भारत की विकास दर की तारीफ विश्व बैंक समेत मूडीज, फिंच और मॉर्गन स्टेनली जैसी क्रेडिट रेटिंग एजेंसियां कर चुकी हैं। खुद एस ऐंड पी का अनुमान है कि पिछले तीन वर्षों में भारत की जीडीपी की औसत वास्तविक वृद्धि दर

जिस तरह सालाना 8.1 फीसदी रही है, उससे यही लगता है कि अगले तीन वर्षों में भी यह सालाना करीब सात फीसदी की दर से बढ़ेगी। इसके अलावा, आने वाले वर्षों में भारत विश्व की शीर्ष तीन अर्थव्यवस्थाओं में शामिल होने की दिशा में बढ़ रहा है। स्पष्ट है कि भारत एक ऐसी अर्थव्यवस्था के रूप में उभर रहा है, जिस पर पूरी दुनिया भरोसा करती है। रेटिंग अहम इसलिए होती हैं कि इनसे एक प्रतिष्ठा जुड़ी होती है। ऐसे में भारत की साख के प्रति एस ऐंड पी ने जो नजरिया बदला है, उससे विदेशी निवेशक निश्चित ही भारतीय बाजारों के प्रति अधिक आकर्षित होंगे, जो समूची अर्थव्यवस्था के लिए शुभ संकेत है।

बदहाल पाकिस्तान और सांस्कृतिक कूटनीति

आर्थिक बदहाली से जूझते पाकिस्तान के विदेश मंत्रालय ने हाल ही में 'गांधार से विश्व तक' शीर्षक से एक परिसंवाद एवं प्रदर्शनी का आयोजन किया, जो दुनिया के समक्ष शांति और सुरक्षा के लिए खतरा बने कट्टरपंथ के खिलाफ एक नरम विकल्प खोजने की कोशिश थी।

वाकई दक्षिण एशिया में इस समय ऐसी गर्मी पड़ रही है, मानो लगता है कि हर चीज जल रही है। इस जलवायु परिवर्तन से पहले रावलपिंडी में गर्मी मई के अंत तक सहनीय होती थी और उसके बाद ही असल में गर्मियां शुरू होती थीं और शैक्षणिक संस्थानों को गर्मी की छुट्टी के लिए बंद कर दिया जाता था। लेकिन इस बार अप्रैल में लगातार बारिश और सर्द वसंत के बावजूद बढ़ते तापमान पर कोई फर्क नहीं पड़ा है।

राजधानी इस्लामाबाद के ऊपर और मुर्री पर्वत के नजदीक मरगल्ला हिल्स के वन क्षेत्रों में गर्मियों की शुरुआत में ही दो बार भीषण आग लग चुकी है। मेरे बगीचे पर नजर डालने पर पता चलता है कि पानी देने के बावजूद सब कुछ मुरझा रहा है। गुलाब जैसे ज्यादातर फूल खिलने से पहले ही सूख रहे हैं। यहां तक कि गर्मियों का फूल गार्डेनिया, (जो आकार में छोटे होते हैं), भी इस भीषण गर्मी को सहन नहीं कर पा रहे हैं। लेकिन पाकिस्तान के दक्षिणी इलाकों, जैसे बलूचिस्तान में भयंकर सूखे के बावजूद गर्मी सहनीय है।

मरिआना बाबर
वरिष्ठ पाकिस्तानी पत्रकार

यहीं पर हम बहुत से स्थानीय एवं विदेशी पर्यटकों को धार्मिक पर्यटन पर पहुंचते देखते हैं, क्योंकि हिंदू समुदाय के लोग हिंगलाज यात्रा के लिए आते हैं। यह कोई नई बात नहीं है, बल्कि अनुष्ठान है, जिसमें हिंदू हमारे सूफी कवि अब्दुल लतीफ भिट्टाई के समय से भाग लेते रहे हैं, जिन्होंने अपनी कविता में इसका उल्लेख किया है। पाकिस्तान के वे इलाके, जहां अब भी हिंदू शांतिपूर्वक रहते हैं, वे हैं मीरपुर खास, बादिन, संघर, उमरकोट, हैदराबाद, घोटकी और कराची। कवयित्री फहमिदा रियाज कहती हैं कि इनमें ज्यादातर गरीब तबके के किसान-मजदूर हैं।

दक्षिण एशिया में इतनी ज्यादा मजहबी असहिष्णुता के बीच यह वाकई सराहनीय है कि चुनौतियों के बावजूद पाकिस्तान के हिंदू समुदाय अब भी सिंध से लंबी सड़क यात्रा करके बलूचिस्तान के पहाड़ों तक

पहुंचते हैं। हाल ही में कराची की मुस्लिम नारीवादी कवयित्री फहमिदा रियाज ने हिंगलाज की यात्रा की। वह कराची से आरसीडी राजमार्ग से होकर यात्रा कर रही थीं और उन्होंने बसों एवं अन्य वाहनों से पुरुषों, महिलाओं, बुजुर्गों और बच्चों को यात्रा करते हुए देखा। फहमिदा रियाज कहती हैं, 'वाहनों में बैठे लोगों के हाथों में लाल और भगवा झंडे थे और उनके बाजुओं पर लाल एवं पीली पट्टियां बंधी हुई थीं। झंडों और पट्टियों पर 'जय माता हिंगलाज' और 'जय माता शेरां वाली' लिखा था।'

अब भारत के हिंदू समुदायों द्वारा यह आवाज उठाई जाने लगी है कि जिस तरह भारत और पाकिस्तान के बीच समझौते के कारण सिख समुदायों के लिए करतारपुर कॉरिडोर की स्थापना की गई है, ताकि वे अपने पवित्र स्थल की यात्रा कर सकें, उसी तरह हिंदू समुदायों को भी ऐसी ही सुविधा प्रदान की जाए, क्योंकि पूरे पाकिस्तान में ऐसे कई प्राचीन हिंदू तीर्थ स्थल हैं, जहां वे जाना चाहते हैं।

इस बीच पाकिस्तान में एक अलग तरह का धार्मिक पर्यटन चल रहा है और वह भी पाकिस्तान की बौद्ध विरासत पर। मुझे याद है कि कुछ दशक पहले मैं पाकिस्तान के उत्तरी इलाके में खैबर पख्तूनख्वा प्रांत के स्वात घाटी की यात्रा पर गई थी। इस प्रांत में बौद्ध विरासत के कई पवित्र स्थल हैं, जिनमें पहाड़ों में उकेरी गई भगवान बुद्ध की विशाल प्रतिमाएं भी हैं। स्वात घाटी में स्थित प्रतिमा बहुत ऊंची नहीं थी, इसलिए मैं उस पर चढ़कर मूर्ति की गोद में बैठकर फोटो खिंचवा पाई थी।

इस हफ्ते पाकिस्तान के विदेश मंत्रालय ने 'गांधार से विश्व तक' शीर्षक से एक परिसंवाद एवं प्रदर्शनी का आयोजन किया था, जो दुनिया के समक्ष मौजूद कट्टरपंथ, जो शांति और सुरक्षा के लिए खतरा है, के खिलाफ एक नरम विकल्प खोजने की कोशिश थी। परिसंवाद का उद्देश्य यह संदेश देना था कि दुनिया भर के लोगों को जोड़ने के लिए कई कारक हैं और बौद्ध विरासत उनमें से एक है। यह पाकिस्तान आकर बौद्ध विरासत के प्राचीन चिह्नों को देखने का एक धार्मिक पर्यटन मात्र नहीं है, बल्कि कई गैर-बौद्ध भी यहां आते हैं, क्योंकि भगवान बुद्ध का शांति का संदेश पर्यटकों को आकर्षित करता है।

खैबर पख्तूनख्वा में प्राचीन गांधार सभ्यता के चिह्न आधुनिक तक्षशिला, पेशावर, चारसद्दा और स्वात में हैं। यह देखना दिलचस्प था कि विदेश मंत्रालय, जो आम तौर पर मुल्क की विदेश नीति को बढ़ावा देने और उसकी रक्षा करने में व्यस्त रहता है, ने पूरी तरह से अलग तरह के पर्यटकों को आमंत्रित किया था। परिसंवाद आयोजित करने के पीछे वैशाख पूर्णिमा का उत्सव मनाने का विचार था, जो भगवान बुद्ध के जन्म, ज्ञान प्राप्ति और निर्वाण का दिवस है।

मुख्य अतिथि श्रीलंका के विदुर विक्रमनायक थे, जो वहां के धार्मिक और सांस्कृतिक मामलों के मंत्री हैं। उनके अलावा, नेपाल, श्रीलंका, थाईलैंड और वियतनाम के धार्मिक नेता और विशेषज्ञ भी मौजूद थे। विदुर विक्रमनायक ने अपने सार्थक वक्तव्य में कहा कि 'आइए, हम सांस्कृतिक कूटनीति को बढ़ावा देने के उद्देश्य से एक गांधार सेतु बनाएं, ताकि लोगों और राष्ट्रों को एक साथ लाया जा सके। हमें गांधार को एक जीवंत विरासत बनाना है।'

थाईलैंड के विश्व बौद्ध विश्वविद्यालय के मानद रेक्टर अनिल शाक्य ने एक वीडियो संदेश भेजा था, जिसमें कहा गया कि 'पाकिस्तान वह स्थान है, जहां बौद्ध इतिहास में पहली बार भगवान बुद्ध की प्रतिमाएं प्रकट हुईं और गांधार कला दुनिया भर के सभी बौद्धों और गैरबौद्धों के लिए बहुत प्रभावशाली रही है।' *अमर उजाला* के पाठकों को यह जानकर खुशी होगी कि पाकिस्तान के संग्रहालयों में भगवान बुद्ध की कुछ बहुत ही दुर्लभ और ऐतिहासिक मूर्तियां हैं, जिनमें सबसे प्रसिद्ध उपवासरत बुद्ध की मूर्ति है।

ऐसे समय में, जब नफरत, उग्रवाद और असहिष्णुता समाजों को बांट रहे हैं, अब वक्त आ गया है कि दुनिया भर के देशों के बीच गांधार सेतु का निर्माण किया जाए, जो शांति और सहिष्णुता के प्रतीक भगवान बुद्ध के संदेश का प्रसार करेगा।

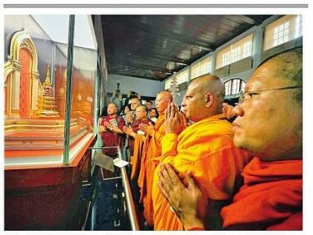

edit@amarujala.com

जीवन धारा

बेंजामिन फ्रैंकलिन

हम जीवन के विभिन्न आयामों पर गौर करें, तो पाएंगे कि वास्तव में जीवन एक लक्ष्य ही है। बिना लक्ष्य का जीवन नीरस होता है। लक्ष्य का निर्धारण एवं प्राप्ति ही हमें निरंतर आगे बढ़ने और संघर्ष करने की प्रेरणा देता है।

जीवन की सार्थकता तभी है, जब कोई लक्ष्य हो

जीवन एक लक्ष्य है और इस जीवन का सबसे बड़ा उद्देश्य खुद का औचित्य साबित करना है। यह तभी संभव हो सकता है, जब हम खुद एक बेहतर जीवन जीएं और दूसरों की भी बेहतर जीवन जीने में मदद करें। बेहतर जीवन जीने और इसका औचित्य साकार करने के लिए किया गया कार्य ही लक्ष्य है। इसलिए जिंदगी में जो भी करें, सार्थक करें। यह अनमोल जीवन हमें कुछ बेहतर करने और जीवन के लक्ष्य का मर्म समझकर आगे बढ़ने के लिए मिला है। अगर हम जीवन के विभिन्न आयामों पर गौर करें, तो पाएंगे कि वास्तव में जीवन एक लक्ष्य ही है। बिना लक्ष्य का जीवन नीरस होता है और इसका कोई मतलब नहीं। लक्ष्य का निर्धारण एवं प्राप्ति ही हमें निरंतर आगे बढ़ने और संघर्ष करने की प्रेरणा देता है। यही हमारी इच्छाओं की पूर्ति का माध्यम भी है। इसलिए अगर हम लक्ष्य का अर्थ और औचित्य समझ लें और सार्थक व रचनात्मक दृष्टिकोण के साथ बढ़ें, तो हम जीवन में सफलता के कीर्तिमान स्थापित कर सकते हैं। लक्ष्य ही व्यक्ति को नई दिशा और गति प्रदान करता है।

सवाल है कि लक्ष्य कैसा हो? हम जीवन का लक्ष्य कैसे निर्धारित करें? लक्ष्य निर्धारण एवं प्राप्ति का औचित्य क्या है? खुद और दूसरों के लिए लक्ष्य की सार्थकता कितनी है? अगर हम इन सवालों का जवाब पा लेते हैं, तो निश्चित ही हम सफल जीवन के मर्म को समझ लेते हैं और यहीं से हमारे सार्थक जीवन की यात्रा शुरू होती है। हमारा लक्ष्य ऊर्जावान, गतिवान और प्रकाशवान होना चाहिए। अगर हम सार्थक लक्ष्य निर्धारित कर उसे प्राप्त कर लेते हैं, तो हम स्वयं दूसरों के लिए लक्ष्य बन जाते हैं। जिस प्रकार जिंदगी जीने के लक्ष्य का निर्धारण जरूरी है, उसी तरह जिंदगी के औचित्य को साकार करने के लिए जीवन के विभिन्न आयामों को भी जानना जरूरी है। जीवन का लक्ष्य इन्हीं आयामों में से एक है। यों तो हर व्यक्ति सुखद और सफल जिंदगी का सपना देखता है, लेकिन सपने को हकीकत में बदल वही पाता है जो जीवन का लक्ष्य निर्धारित करता है, उसके महत्व को समझता है और उसे पाने के लिए अनवरत प्रयत्नशील रहता है। हालांकि ऐसे लोग भी मिल जाएंगे, जो जीवन में किसी तरह के लक्ष्य तय करने की जरूरत या अहमियत को नहीं मानते। उन्हें लगता है कि बिना लक्ष्य निर्धारण के भी हम जीवन में सफल हो सकते हैं। लेकिन ऐसा नहीं है। बिना लक्ष्य के जो कुछ हम हासिल करते जाते हैं और उसे ही सफलता मान बैठते हैं, सच्चे अर्थों में वह सफलता तो कहीं से भी नहीं कही जा सकती। जीवन का औचित्य साकार करने के लिए भी लक्ष्य का होना बहुत जरूरी है, क्योंकि यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जो हमारे संपूर्ण व्यक्तित्व को आकार देती है और इसी में हमारे जीने का ढंग, आचरण, व्यवहार, स्वाभिमान, प्रेम, सहयोग, क्षमा, त्याग, सद्भाव, परोपकार, सोचने-समझने का तरीका जैसे सारे मानवीय गुण शामिल होते हैं।

लक्ष्य कभी समाप्त नहीं होता

सूत्र

सफलता एक अनवरत यात्रा है। एक लक्ष्य हासिल कर लेने के बाद दूसरा तय करें, फिर तीसरा और यह क्रम सतत चलता रहे। जिस दिन हम यह मान बैठेंगे कि हमने सब कुछ पा लिया, सारे लक्ष्य हासिल कर लिए, अब जीवन में पाने के लिए कोई लक्ष्य बाकी रह गया है क्या? उसी दिन हमारे जीवन में ठहराव की प्रक्रिया शुरू हो जाएगी और हमारा यह अनमोल जीवन गतिहीन, सारहीन और दिशाहीन बनने की ओर अग्रसर हो चलेगा।

दूसरा पहलू

टीके के जरिये अमेरिका 50 साल पहले ही पोलियो मुक्त हो चुका है, लेकिन पाकिस्तान और अफगानिस्तान में यह अब भी सक्रिय है।

पोलियो के कुछ मामले और लाखों लोगों की उन्मूलन टीम

विश्व को पोलियो मुक्त करने का लक्ष्य कठिन है। टीके के जरिये अमेरिका के पोलियो मुक्त हुए लगभग पचास साल हुए। लेकिन दुनिया के कुछ दुर्गम इलाकों, खासकर पाकिस्तान और अफगानिस्तान में चूंकि अब भी पोलियो सक्रिय है, लिहाजा विश्व स्वास्थ्य संगठन, गेट्स फाउंडेशन और सेंटर्स फॉर डिजीज कंट्रोल ऐंड प्रिवेंशन की तिकड़ी उन बचे हुए इलाकों को पोलियो मुक्त करने के प्रयास में लगे हैं। इन्हीं प्रयासों का नतीजा है कि पोलियो के जो मामले 1988 में साढ़े तीन लाख थे, वे पिछले साल घटकर सिर्फ बारह रह गए।

पाकिस्तान-अफगानिस्तान की सीमा पर पोलियो मुक्त अभियान में मुख्यतः महिलाओं की ही हिस्सेदारी है। हर टीम पर 75 घरों की जिम्मेदारी है। टीम के सदस्य हर घर में या एक मस्जिद से दूसरी मस्जिद के बीच के घरों में बच्चों को पोलियो ड्रॉप पिलाते हैं। चूंकि इन इलाकों के लोग बहुत गरीब हैं। पोलियो टीम के बार-बार दस्तक देने पर वे चिढ़ जाते हैं। इसलिए पोलियो टीम बच्चों के लिए टॉनिक और दूसरी चीजें ले जाती है। पोलियो टीम पर इन गांवों के लोगों के बीच अपना भरोसा बनाए रखने की भी बड़ी जिम्मेदारी है। वर्ष 2011 में अमेरिकी खुफिया एजेंसी सीआईए ने ओसामा बिन लादेन को पकड़ने के लिए इस इलाके में फर्जी पोलियो अभियान चलाया था, इस कारण भी स्थानीय लोगों में पोलियो टीम के प्रति अविश्वास बढ़ा है।

रिटर्ड कैनिफ

पाकिस्तान और अफगानिस्तान में पोलियो के जो मामले 1988 में साढ़े तीन लाख थे, वे पिछले साल घटकर सिर्फ बारह रह गए। अब ये मामले केवल दो ही बचे हैं।

वर्ष 2011 में अमेरिका की खुफिया एजेंसी सीआईए ने ओसामा बिन लादेन को पकड़ने के लिए फर्जी पोलियो अभियान चलाया था, इस कारण भी स्थानीय लोगों में पोलियो टीम के प्रति अविश्वास बढ़ा है।

पोलियो के महज कुछ मामले सामने आने के बावजूद पाकिस्तान में पोलियो उन्मूलन टीम में चार लाख और अफगानिस्तान में 86,000 कार्यकर्ता हैं। इसी का नतीजा है कि पोलियो के 12 मामले भी घटकर अब दो पर सिमट गए हैं। यूनिसेफ के पोलियो कार्यक्रम से जुड़ी शीबा अफगानी कहती हैं कि पोलियो टीम जब किसी घर में जाकर किसी बच्चे को गैरहाजिर पाती है, तो घरवालों से पूछताछ करती है। जब पता चलता है कि बच्चा पड़ोस के जिले में गया है, तो वहां की टीम को बच्चे के बारे में बता दिया जाता है। पोलियो का पता करने के लिए अब कई नए उपकरण सामने आ गए हैं।

'भारत जब 2010 में पोलियो से लड़ रहा था, तब उसकी लगभग 10 साइट्स सीवेज और पानी वाले इलाकों में लगातार पोलियो वायरस की जांच कर रही थीं', विश्व स्वास्थ्य संगठन के पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम के निदेशक डॉ. हामिद जाफरी कहते हैं। ठीक इसी तरह पोलियो टीम की लगातार सजगता से पेशावर में लंबे समय से पोलियो का एक भी मामला नहीं आया है।

©The New York Times 2024

आंकड़े

शिक्षा पर व्यय

दक्षिण अफ्रीका पूरे विश्व में अपने सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का शिक्षा पर सबसे ज्यादा पैसा खर्च करता है।

दक्षिण अफ्रीका	6.2%
ब्राजील	5.8%
ऑस्ट्रेलिया	5.6%
अमेरिका	5.4%
ब्रिटेन	5.3%
फ्रांस	5.2%
भारत	4.6%

रूस (3.7%) 11वें और चीन (3.3%) 12वें स्थान पर है। | स्रोत: World Bank

देवगुरु बृहस्पति ने अपने पुत्र कच को मृत संजीवनी विद्या सीखने के लिए शुक्राचार्य के पास भेजा। उन्होंने बड़े प्यार से उन्हें यह विद्या सिखाई।

कच ने शुक्राचार्य से सीखी विद्या

अंतर्यात्रा
संकलित

भगवान ब्रह्मा जी के तीसरे मानसिक पुत्र भृगु हुए। उनके कवि और कवि के असुर गुरु महर्षि शुक्राचार्य हुए। शुक्राचार्य योग विद्या में पारंगत थे और उनकी *शुक्रनीति* काफी प्रसिद्ध है। भले शुक्राचार्य असुरों के गुरु थे, लेकिन वह मन से भगवान के अनन्य भक्त थे। उन्हीं के प्रभाव से प्रह्लाद, विरोचन, बलि आदि असुर कुल में पैदा होने के बावजूद भगवान विष्णु के भक्त बने।

कहा जाता है कि गुरु शुक्राचार्य के पास मृत संजीवनी विद्या थी। इससे वह संग्राम में मारे जाने पर राक्षसों को पुनः जीवित कर देते थे। वहीं देवों के गुरु बृहस्पति के पास यह विद्या नहीं थी। देवगुरु ने अपने पुत्र कच को शुक्राचार्य के पास मृत संजीवनी विद्या सीखने के लिए भेजा। वह कच को बड़े ही प्यार के साथ यह विद्या सिखाने लगे। यह बात असुरों को पता चल गई। उन्होंने कच को कई बार मार दिया, लेकिन गुरु शुक्राचार्य हर बार उसे जिंदा कर देते थे। अंत में दैत्यों ने कच को मारकर छल से उसकी राख सुरा में मिलाकर शुक्राचार्य को पिला दी।

ऋषि ने ध्यान से देखा और कच से कहा-मैं तुम्हें पेट में ही यह विद्या सिखाता हूं। बाद में मेरा पेट फाड़कर बाहर आ जाना और तुम मुझे जिंदा कर देना। कच ने ऐसा ही किया। इसके बाद शुक्राचार्य ने कहा कि मैं आज से यह मर्यादा बांधता हूं कि जो मंदबुद्धि ब्राह्मण भूल से भी मदिरा का सेवन करेगा, उसके समस्त धर्म का नाश हो जाएगा और ब्रह्महत्या का पाप लगेगा।

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 30 नवंबर, 1949

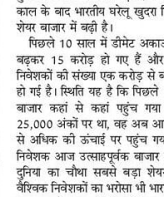

रूस के वफादार रहो जेल के फाटक तोड़ दो

रूस के वफ़ादार रहो
जेल के फाटक तोड़ दो

कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा बुलाए गए शांति सम्मेलन में दिए भाषणों में जनता से कहा गया कि वे नेहरू सरकार को उखाड़ फेंकें और रूस के प्रति वफादार रहने की शपथ लें। जेल से रिहा होने वाले कम्युनिस्ट नेता ने कहा कि उठो और जेल के फाटक तोड़ दो।

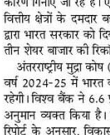

अर्थव्यवस्था की मजबूती के संकेत

भारत की अर्थव्यवस्था के तेजी से आगे बढ़ने के जो संकेत उभर रहे हैं, उन्हें चार जून के बाद नई स्थिर सरकार से आर्थिक पंख लग जाएंगे।

जयंतीलाल भंडारी | **बढ़ते कदम**

इन दिनों प्रकाशित हो रही राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय रिपोर्टों और विभिन्न बाजार विश्लेषणों में कहा जा रहा है कि भारत की अर्थव्यवस्था के तेजी से आगे बढ़ने के जो शुभ संकेत उभरकर दिखाई दे रहे हैं, उन्हें चार जून के बाद नई स्थिर सरकार से आर्थिक पंख लग जाएंगे। ऐसे मजबूत आर्थिक परिदृश्य की संभावनाओं के तीन महत्वपूर्ण कारण गिनाए जा रहे हैं। एक भारत के वित्तीय और गैर वित्तीय क्षेत्रों के दमदार बही-खाते। दो रिजर्व बैंक के द्वारा भारत सरकार को दिया गया रिकॉर्ड लाभांश और तीन शेयर बाजार की रिकॉर्ड ऊंचाई।

अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) ने कहा है कि वर्ष 2024-25 में भारत की विकास दर 6.8 प्रतिशत रहेगी। विश्व बैंक ने 6.6 प्रतिशत विकास दर रहने का अनुमान व्यक्त किया है। एशियाई विकास आउटलुक रिपोर्ट के अनुसार, विकास दर 7 प्रतिशत रह सकती है। देश के प्रमुख अर्थ विशेषज्ञों का मत है कि जहां

पिछले वित्त वर्ष 2023-24 में विकास दर सात प्रतिशत से अधिक है, वहीं यह आगामी दशक तक 6.5 से सात प्रतिशत के स्तर पर दिखाई देगी। विभिन्न रिपोर्टों के अनुसार, भारत में वर्ष 2023-24 में प्रत्यक्ष कर संग्रह 17.7 फीसदी बढ़कर 19.58 लाख करोड़ रुपये हो गया है। 2023-24 में जीएसटी उच्चतम स्तर पर रहा है। इसका आकार 20.18 लाख करोड़ रुपये रहा है, जो पिछले वर्ष की तुलना में 11.7 फीसदी अधिक है। रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया (आरबीआई) ने 22 मई को वित्त वर्ष 2023-24 में भारत सरकार को 2.11 लाख करोड़ रुपये लाभांश देने की मंजूरी दी है। चालू वित्त वर्ष 2024-25 के अंतरिम बजट में सरकार ने रिजर्व बैंक और सरकारी बैंकों के लाभांश से 1.02 लाख करोड़ रुपये मिलने का अनुमान लगाया था। ऐसे में 'रिजर्व बैंक द्वारा दिया जाने वाला लाभांश बजट अनुमान की तुलना में 107 फीसदी ज्यादा है। यह एक तरह से सरकार के लिए मौजूदा वित्त वर्ष में 1.09 लाख करोड़ रुपये के अप्रत्याशित लाभ जैसा है। साथ ही पिछले साल के 87,416 करोड़ रुपये लाभांश की तुलना में 142 फीसदी ज्यादा है।

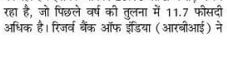

उल्लेखनीय है कि बिमल जालान समिति की सिफारिश के अनुसार, नया आर्थिक पूंजी ढांचा लागू होने के बाद 2018-19 में केंद्रीय बैंक ने सरकार को 1.76 लाख करोड़ रुपये अधिशेष दिया था। जालान समिति ने यह पता लगाया कि रिजर्व बैंक से सरकार को कितना अधिशेष मिलना चाहिए। वित्त वर्ष 2023-24 में आरबीआई ने आकस्मिक जोखिम बफर बढ़ाकर 6.5 फीसदी कर दिया है। जालान समिति ने इसे आरबीआई की बैलेंस शीट के 5.5 से 6.5 फीसदी के दायरे में रखने का प्रस्ताव दिया था। रिजर्व बैंक द्वारा सरकार को रिकॉर्ड लाभांश दिए जाने के निर्णय और वैश्विक आर्थिक संगठनों व वैश्विक क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों द्वारा वर्ष 2024-25 में भारत की ऊंची विकास दर के अनुमानों के बाद भारतीय शेयर बाजार रिकॉर्ड उच्च स्तर पर पहुंच गया है। यह कोई छोटी बात नहीं है कि बीएसई में सूचीबद्ध कंपनियों का कुल बाजार पूंजीकरण पांच लाख करोड़ डॉलर के पार पहुंचने के साथ ही भारत इस मुकाम तक पहुंचने वाला दुनिया का पांचवां सबसे बड़ा देश बन गया है। कोरोना काल के बाद भारतीय घरेलू खुदरा निवेशकों की रुचि शेयर बाजार में बढ़ी है।

पिछले 10 साल में डीमेट अकाउंट 2.3 करोड़ से बढ़कर 15 करोड़ हो गए हैं और म्यूचुअल फंड-निवेशकों की संख्या एक करोड़ से बढ़कर 4.5 करोड़ हो गई है। स्थिति यह है कि पिछले 10 साल में शेयर बाजार कहां से कहां पहुंच गया है, जो सेंसेक्स 25,000 अंकों पर था, वह अब आज 75,000 अंक से अधिक की ऊंचाई पर पहुंच गया है। लाखों छोटे निवेशक आज उत्साहपूर्वक बाजार से जुड़े हैं। भारत दुनिया का चौथा सबसे बड़ा शेयर बाजार है और वैश्विक निवेशकों का भरोसा भी भारत के शेयर बाजार पर बढ़ा है। अब ऐसी आर्थिक मजबूती से देश में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) में वृद्धि होगी। इससे भारत में कारोबारी माहौल में सुधार होगा। एफडीआई का एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि विदेशी निवेशक तकनीकी विशेषज्ञता भी लाते हैं। निश्चित रूप से शेयर बाजार के तेजी से बढ़ने और रिजर्व बैंक द्वारा सरकार को 2.11 लाख करोड़ रुपये का बंपर लाभांश दिए जाने से नई सरकार को व्यय प्रबंधन में खासी मदद मिलेगी।